CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

लीला-दर्पण

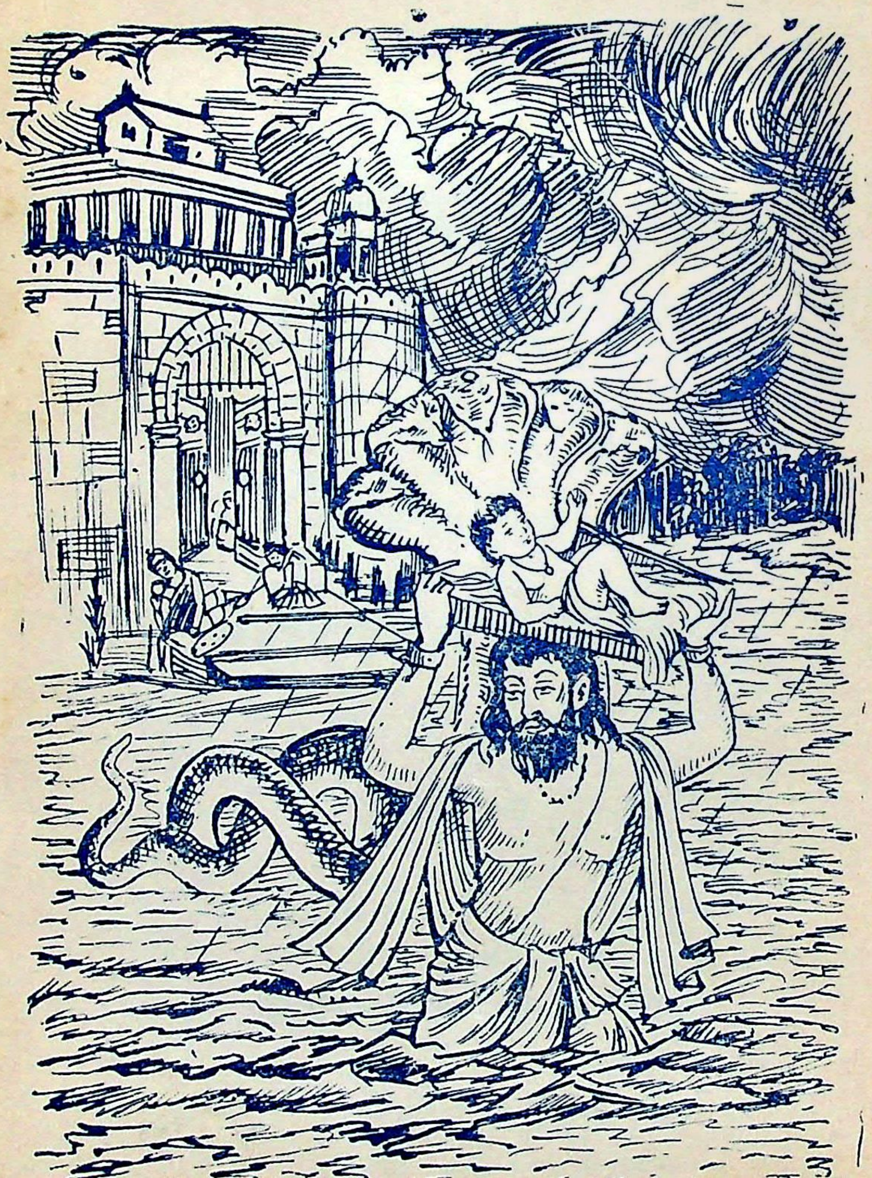

लीला-दर्पण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

परमयोगी श्री स्वामी सनातन श्री

★

प्रकाशक

श्री स्वामी सनातन श्री न्यास

श्री सनातन आश्रम

गौराबाग, कुर्सी रोड, लखनऊ

फोन : ~~[illegible]~~ मूल्य रु—१५—००

361796

प्रकाशक :
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
श्री स्वामी सनातन श्री न्यास

श्री सनातन आश्रम,

गौराबाग, कुर्सी रोड, लखनऊ-७

फोन : ७३७९७

★

सर्वाधिकार स्वामी सनातन श्री

★

पुनः पुनः प्रकाशित संस्करण
(श्रीकृष्ण जन्माष्टमी सम्वत्--२०४२)

★

मुद्रक :

नवभारत प्रेस

१३८, नादान महल रोड, लखनऊ

फोन : ४२१४२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भूमिका

"ईश्वर यदि मनुष्य न बना तथा मनुष्य यदि ईश्वर न बन पाया तो मनुष्य के लिये ईश्वर की कल्पना का क्या प्रयोजन ?"

भय, लोभ अथवा प्रलोभन के लिए ईश्वर में आस्था भक्ति का विधान सनातन धर्म में नहीं है। सनातन धर्म में आदि काल से ईश्वरीय साधना, भक्ति एवं आस्था का स्पष्ट मुख्य उद्देश्य यही रहा है कि ईश्वर की सुन्दर, सुखद कल्पना से धरती वा मनुष्य मात्र ईश्वरीय अच्छाइयों को धारण कर--धरती का ईश्वर बने। ईश्वर ही की भाँति प्राणीमात्र को समर्पित होकर, मनुष्यता ईश्वरत्व की महानतम ऊँचाइयों को प्राप्त हो। मनुष्य प्राणीमात्र के लिये ईश्वर बने और धरा स्वर्ग हो जाय।

ईश्वर शब्द ऐश्वर्य से बना है। ईश्वर शब्द की निकटतम शाब्दिक परिभाषा है :--

"जो प्राणी मात्र को ऐश्वर्य दे; स्वयं को भुलाकर उसे कहते हैं ईश्वर।"

घट-घट वासी आत्मा को इसीलिये ईश्वर की संज्ञा मिली। आत्मा ही सचराचर में मिट्टी को सुन्दर वनस्पतियों में तथा वनस्पतियों को नाना जीवधारियों के स्वरूप मे लौटा रहा है परन्तु भरण-पोषण और उत्पत्ति का सम्मान जीवमात्र को मिल रहा है। जो एक अँगुली बनाना नहीं जानता, माता-पिता कहलाता है; जबकि बालक को बनाने वाली आत्मा लुप्त है।

जिसने वेद दिये उसी ने लीला ग्रन्थ भी दिये। वेदव्यास लीलाओं का अद्भुत जादूगर है। जिन्हें आप रास-लीला के नाम से जानते हैं इनका सही नाम था रहस्य-लीला जो कालान्तर में रहस्य-लीला से अपभ्रंश होकर रहास-लीला और कालान्तर में रास-लीला तथा वर्तमान में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

रस-लीला मात्र बनकर रह गया है। प्रस्तुत ग्रंथ रहस्य लीलाओं को उनके मौलिक स्वरूप में ही रखकर पाठक को सुखद आश्चर्य से भर देता है।

लगभग दो हजार वर्ष की लम्बी गुलामी के उपरान्त जब देश स्वतन्त्र हुआ तो सनातन धर्म पर उन सम्प्रदायों तथा समय की धूल की गहरी छाप पड़ चुकी थी। आजादी के उपरान्त स्वतन्त्र वायुमण्डल का स्पर्श लेने से पूर्व ही नये क्रान्ति के दौर का पहला प्रहार पुनः गुलामी में कुण्ठित धर्म पर पड़ा। धर्म निरपेक्षता के नाम पर धर्म को राजनीति से, समाज से और शिक्षा से अलग होना पड़ा। जंगल में उग आई निरंकुश घास की तरह, अनाधिकार धर्म किसी प्रकार जीने का प्रयास करता रहा है। ऐसी स्थिति में उसके मौलिक स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

आपके घर का आँगन है। उस आँगन के जिस कोने की आप उपेक्षा करेंगे, कूड़ा वहीं तो इकट्ठा होगा? ठीक! ऐसा सनातन धर्म के साथ हुआ। राजनीति, शिक्षा और समाज से उपेक्षित होकर धर्म पिछले छत्तीस वर्षों में कुछ अधिक संकीर्ण और विकृत हुआ है। उसके लिए उत्तरदायी कौन है? कुछ ऐसे चुभते प्रश्न भी पूछे हैं लेखक ने।

१९४७ से अब तक जितना भी सस्ता साहित्य और उपन्यास छपते रहे; वे धर्म, सन्यासियों और धर्मावलम्बियों को खलनायक बनाकर कीचड़ उछालते रहे तथा भावी पीढ़ियों के मन में धर्म के प्रति निरन्तर घृणा, उपेक्षा तथा हीनता की भावनाओं को फैलाते रहे हैं। कल और आज के सन्दर्भों में सत्य और न्याय की याचना करने वाला यह ग्रन्थ और उसके लेखक स्वामी सनातन श्री दोनों ही मौलिक एवं अनूठे हैं। आजादी से आज तक प्रकाशित साहित्य एवं इस विषय को लेकर लिखे गये सभी प्रकार के साहित्य से, यह सर्वथा भिन्न है। समय-समय पर सन्यासी की सशक्त वाणी ने आज और कल के सन्दर्भों को जोड़कर समस्याओं को सही रूप में जनता के सामने रखा तो जन मानस स्तब्ध अवाक रह जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

गाँधी-भवन लखनऊ ! सनातन स्वामी के भाषण से !

"...... पेड़ वहाँ पर खड़ा है, उसकी परछाईं दूर तक फैली हुई है ! क्या तुम परछाइयों पर कुल्हाड़े चलाकर पेड़ गिरा दोगे ?

दहेज प्रथा समस्या रूपी पेड़ नहीं, पेड़ की परछाईं मात्र है। समस्या रूपी पेड़ क्या है ?

प्रत्येक लड़की का पिता चाहता है कि उसे दामाद वह मिले जिसकी भले हजार रुपये महीने की नौकरी हो, परन्तु ऊपर की चार-पाँच हजार रुपये की आमदनी (घूस) हो। अपने स्तर और इच्छाओं के अनुरूप प्रत्येक लड़की का पिता करप्ट, घूसखोर, राष्ट्रद्रोही, समाजद्रोही दामाद ढूंढ़ रहा है। तव लड़के का पिता सोचता है जव बेईमान लड़के का ही वाजार गर्म है तो उसका लड़का महा वेइमान हो। यदि दूसरा पाँच हजार रुपया घूस ले रहा है तो मेरा लड़का ऐसी नौकरी में आवे जहाँ बीस हजार घूस मिल रही हो। अव आपही वतावें जो रोज-मर्रा की जिन्दगी में विना घूस लिये काम नहीं करता यदि वह अपने श्वसुर साहब से घूस नहीं लेगा तो क्या अपने चरित्र पर धब्बा नहीं लगावेगा ? समस्यारूपी पेड़ यहाँ पर है। क्या दोष प्रथा में है अथवा हमारे नैतिक पतन में ? समाज की वदलती मान्यताओं में ? गिरते मानवीय एवं नैतिक मूल्यों में ?

कभी दहेज प्रथा इस समाज की महानतम समाजवादी परम्परा थी। गाँव में एक लड़का और लड़की का विवाह हुआ। सारे समाज ने एकत्र होकर नवदम्पत्ति के माता-पिता एवं स्वजन अभिभावकों से कहा कि वे स्वयं मिलकर वर-वधू को भौतिक जीवन में स्थापित नहीं कर सकते। समाज उन्हें ऐसा नहीं करने देगा। क्यों ? उन्होंने पूछा !

इसलिये कि दो परिवार मिलकर उनके जीवन को स्थायित्व प्रदान कर देंगे तो नव दम्पत्ति के दायित्व दो परिवारों तक सीमित रह जावेंगे ! समाज ने कहा हम ऐसा नहीं होने देंगे। नव-दम्पत्ति को उनके जीवन में स्थायित्व, सारे समाज द्वारा मिलकर ही होगा जिससे वे सारे समाज के प्रति उत्तरदायी हों। अन्यथा समाज का विघटन प्रारम्भ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

होता था। सारे गांव के लोग मिलकर [illegible] देते थे, बर्तन सामान आदि देते थे। चार भाई उनकी झोपड़ी बनाकर देते थे। पिता हल बैल देता था। श्वसुर बैलगाड़ी देता था। गांव के प्रधान, मुखिया, महन्त अथवा राजा जो भी हो; जब नवदम्पत्ति उन्हें प्रणाम करने जाते थे तो मुखिया कन्या के चरण पूजता था साथ में दस बीघा जमीन का पट्टा लिखकर देता था। इस प्रकार सारा समाज मिलकर उनके जीवन को स्थायित्व प्रदान करता था। वह दहेज प्रथा का शुद्ध स्वरूप था। क्या इससे सुन्दर इससे महान प्रथा की कल्पना हमको हो सकती है ?

विचार करें कि दोष प्रथा में है अथवा हमारे नैतिक पतन में ? उसका कारण ? आज की शिक्षा का उद्देश्य क्या है ? आपको आपके लाड़ले की सौगन्ध, सच बतायें आप लड़के को क्या इसलिए पढ़ने नहीं भेजते हैं कि अच्छी नौकरी, तगड़ी तनखा और खूब मोटी घूस मिले ! तभी मैं कहूं कि मेरा बेटा सुखी है ? आज की शिक्षा का उद्देश्य मात्र इतना ही तो है कि एक परिवार के सीमित हितों के साधन में मैं सारे समाज का शोषण करूँ ! मूल ! समस्या यहाँ पर है जिस ओर हम देखना भी नहीं चाहते हैं। क्यों ?

इस समस्या को सुधारे बिना क्या एक देश को, समाज को, जाति को, संस्कृति को, महा विनाश से बचाया जा सकेगा ?......"

नशाबन्दी ! आश्रम में एक शराबी को उसके घर के लोग पकड़ कर लाये। कहने लगे स्वामी जी जितना हम इसे मना करते हैं उतना ही ज्यादा पीने लगता है। पूछा :-मित्र तुम शराब पीते हो यह बात तो समझ में आती है। परन्तु जब लोग मना करते हैं तो तुम अधिक पीने लगते हो ! इसका कारण ? उसने उत्तर दिया--

--स्वामी जी ! जब यह कहते हैं शराब मत पियो ! शराब मत पियो ! तो शराब तक ही मैं सुन पाता हूं। मेरी तलब जग जाती है। मैं फिर पी लेता हूं। कहीं हम लोग नशाबन्दी चिल्ला चिल्ला कर तलब तो नहीं बढ़ा रहे ?

वह नशा क्यों करता है ? क्योंकि इससे बढ़िया नशा नहीं जानता। बढ़िया बर्फी खाने के बाद क्या तुम सड़ा हुआ गुड़ खाना चाहोगे ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
आज की शिक्षा ने उसे आत्मा के आनन्द का नशा कराया। सिखाया होता तो सड़ा गुड़ त्याग कर बर्फी की ओर बढ़ता। परन्तु हम अभिशप्त शिक्षा प्रणाली की ओर देखना भी नहीं चाहते हैं .... ।

बाल विवाह ! हम पर थोपी गई मजबूरी है। हमारे यहां स्वयंवर होते थे। जब तक कन्या मानसिक रूप से परिपक्व नहीं होगी अपने पति का स्वेच्छा से चयन कैसे कर पायेगी। गुलामी के युगों की कहानियों को दोहरा लो ! जबरन लड़कियों को उठाने वाले युग ने हमें बाल विवाह के लिये मजबूर किया।

बढ़ती हुई जनसंख्या का निदान हम ढूंढ़ रहे हैं। आज की राष्ट्रीय शिक्षा, पाश्चात्य कुरीतियों का अन्धानुकरण, सिनेमा, टी० वी, ब्लू-फिल्म्स, सस्ता साहित्य सभी कुछ शायद इसीलिए है। एक ओर आप इसे अन्धे की भाँति देखना नहीं चाहते हैं। दूसरी ओर आप जबर्दस्ती काटना चाहते हैं ...... ।"

कल और आज के बदलते प्रारूप, मान्यताओं, समस्याओं और उनके निदान का सरस सहज और डुबा देने वाला चित्रण देखें आप लीला दर्पण में।

लीला-दर्पण में आपको लगेगा कि कृष्ण की लीलाओं में आप स्वयं को देख रहे हैं। पूतना–अपवित्रता ! अघासुर–अज्ञान ! बकासुर छल-कपट दम्भ और ढोंग ! आदि असुर लीलाएँ अद्भुत विस्मयकारी तो हैं ही; विलक्षण रूप से आपको ही आपके नाना स्वरूपों, भावों, विचारों तथा जीवन के विभिन्न स्तरों को स्पष्ट करती आपके जीवन को सर्वांग नया मोड़ देती है।

लीलाओं एवं धर्म को वर्तमान युग की परिस्थितियों एवं सन्दर्भों से जोड़ देने के कारण ग्रन्थ जहां एक ओर पाठक के हृदय में अतीत के गौरव से गर्व उत्पन्न कराता है वहीं वर्तमान युग से जोड़कर ग्रन्थ की सार्थकता को कई गुना अधिक बढ़ा देता है।

आपके हाथों में एक ऐसा ग्रन्थ है जिसे आप जीवन में कभी...कभी भुला नहीं सकते !

—सम्पादक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

दस इन्द्रियों रूपी दस फन वाले कालिया नाग को 'नथ', रे सखा ! अन्तर्मुखी हो । जा लिपट आत्मा कृष्ण से ! फिर तू ही तो कन्हैया है.................. ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

लीला-दर्पण

अष्टमी की अन्धेरी रात ! कंस की जेल की सीलन भरी कोठरी ! हथकड़ियों और वेड़ियों से जकड़े वीर, तपस्वी वसुदेव ! प्रसव की पीड़ाओं से अचेत, पवित्र देवकी ! द्वार पर सजग खड़े प्रहरी ! प्रत्येक आहट पर चौंक पड़ते हैं। ......अभी नवजात शिशु का रुदन होगा, वे दौड़कर कंस को सूचना देंगे। उन्हें कंस से वहुत सा पुरस्कार मिलेगा। हलकी सी आहट भी चौंका देती है, उनको ! हाथों में भाले लिये, लालच भरी निगाहों से झांकते वे भयानक चेहरे ! भावी की कल्पना से सिहर उठते वसुदेव। फिसलती अस्पष्ट फुसफुसाती अष्टमी की अन्धेरी रात ! द्वार पर मशाल की रोशनी, जिसकी थरथराती किरणें उस कोठरी के वातावरण को और भी अधिक भयावह बना देती है। वायुदेव स्थिर हैं। गगन घने बादलों से गहराया हुआ। कौंधती विजली का पीछा करती, दिल को दहलाने वाली गड़गड़ाहट--फिर निस्तब्धता ! वसुदेव अपनी सांसों को सुन सकते हैं। पीड़ा, भय, आतंक, बेबसी और सीलन भरी उदास कोठरी में असहाय, दीन, दो मूक स्तब्ध प्राणी। निरपराध अपराधी।

भाई ने निर्दोष पवित्र भोली बहन को लम्बी जेल की सजा दी है। साथ में अपने वहनोई वसुदेव को भी जेल में बन्द कर दिया है। उनका अपराध क्या है ? कंस को भय है कि देवकी का पुत्र उसकी मृत्यु का कारण बनेगा। इसीलिए वह उन्हें जेल में बन्द करके उनकी प्रत्येक सन्तान को जन्मते ही मार देता है। सात गर्भ नष्ट कर चुका ! आठवां प्रसव अब होने को है। निष्पाप देवकी अचेत है और पवित्र, निष्कलंक वसुदेव उदास, सभीत, असहाय।

नारायण यह लीला है तुम्हारी ! हे लीला-धाम ! तुम लीला रूपी दर्पण में मुझे मेरा सत्य ही तो दिखा रहे हो। न जाने कितनी वार सत्य और न्याय को, वसुदेव व देवकी की भांति झूठ की जेल में बन्द किया है। क्यों ?...क्योंकि वह सत्य मेरे हितों के विपरीत जो था। इसलिये इस झूठ रूपी जेल में सत्य रूपी वसुदेव व न्याय रूपा देवकी को मैं कंस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

बनकर बन्द करता आया हूं। कंस ने भी तो निरपराध निष्पाप वसुदेव देवकी को अपने हित के विपरीत जान कर जेल में बन्द किया। मैं भी तो सत्य और न्याय के निर्णयरूपी पुत्र को, मेरे तथाकथित स्वजनों के हितों के विपरीत जानकर असत्य की जेल में न जाने कितनी वार फांसी दे आया हूं। कंस का तो एक ही पाप था, परन्तु मेरे? गोपाल! गिन न पाऊँगा। वासुदेव! इस अधम को इसके भीतर छिपा कंस दिखाने के लिए ही तुमने लीला रची है। तुम्हारी लीला के दर्पण में आज, मैं मेरे ही असंख्य स्वरूपों को देख रहा हूं। मिथ्याभिमान और मोहान्धता का पाप—हे निष्पाप! तुम्हारी लीला रूपी दर्पण में निज को देख पिघल रहा है। रे मन! कंस स्वरूप को त्याग। निर्मल हो। भज! गोविन्द हरि।

समय फिसल रहा है। हथकड़ियों बेड़ियों से जकड़ हुए पवित्र वसुदेव असहाय थके हुए गर्दन घुमाकर अचेत देवकी की ओर देखते हैं। उनका मन तड़प कर चीत्कार कर उठता है "हा! देवकी मैं तुझे यही सब कुछ तो दे पाया! हर वार तू मां वनी! जी भर के निहार भी न सकी और उसकी महीन चीख के साथ तू अचेत हुई। अपने ही भोले निरपराध शिशु के छितराये हुए मांस के लोथड़ों को मैं अपने हाथों बटोर भी तो न सका। मेरे और तुम्हारे स्वप्नों के देवता वे अबोध शिशु, निरपराध! टुकड़ों में छितराते रहे। स्वप्न सजने से पहले ही चूर-चूर होते रहे। मैं असहाय, मौन, कायर की भांति देखता रहा। काश मैं तुझे विवाह के न लाया होता अथवा कंस के साथ समझौते के स्थान पर मृत्यु को स्वयं वर लिया होता। हा! वसुदेव! एक असहाय निष्पाप पवित्र अवला की रक्षा भी न कर पाया। धिक्कार है ऐसे क्षत्रियत्व पर। जिसके शौर्य को शत्रुओं ने सराहा। वही महारथी ... . ।

तभी जेल की कोठरी अलौकिक प्रकाश से जगमग हो उठती है। वसुदेव चौंक कर अपनी वोझिल पलकों को ऊपर उठाते हैं तो क्या देखते हैं? चतुर्भुज भगवान महाविष्णु जेल की कोठरी में प्रकट हो गये हैं। शंख, चक्र, गदा, पद्म से सुशोभित उनकी मनोहारी छवि को देख कर वसुदेव असीम शान्ति एवं शक्ति का अनुभव करते हैं। वसुदेव नारायण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

को प्रणाम करते हैं। हथकड़ी से जकड़े हाथों को जोड़कर महाविष्णु की ओर बढ़ने का प्रयास करते हैं परन्तु पैरों की बेड़ियां उन्हें आगे नहीं बढ़ने देतीं और वे लड़खड़ा कर गिर पड़ते हैं। हथकड़ी और बेड़ियों से जकड़े वसुदेव दूर से ही महाविष्णु को प्रणाम करते हैं। उनके नेत्रों से अश्रु धारा अविरल आवेग से प्रवाहित हो उठती है। स्तुति भी ठीक से नहीं कर पाते हैं। जैसे अपने स्वजन को देखकर, लम्बे समय से प्रताड़ित किया जाता बालक फफक कर रो उठता है। आज वही दशा पवित्र वसुदेव की भी है। महाविष्णु वसुदेव को सांत्वना देते हुए कहते हैं, "वसुदेव! तुम्हारी पीड़ाओं को समाप्त करने हेतु, पापी कंस के पाप के भार से धरा को मुक्त करने के लिए, धर्म एवं सत्य की पुनर्स्थापना के लिए, मैं शीघ्र ही प्रकट होने वाला हूं। जब मैं देवकी के गर्भ से नवजात शिशु के रूप में प्रकट हो जाऊँ तब तुम मुझे कंस के आने के पूर्व ही एक टोकरी में रखकर और टोकरी को सिर पर रखकर नन्द बाबा के यहां छोड़ आना तथा वहाँ से योगमाया को ले आना।"

वसुदेव ने कहा—"जो आज्ञा।"

महाविष्णु अन्तर्ध्यान हो गए। तभी देवकी को प्रसव हुआ और नवजात शिशु के रूप में नारायण प्रकट हो गए। देवकी अचेत है। वसुदेव कर्त्तव्य बोध से व्यथित हैं। वे कुछ समझ ही नहीं पाते कि अब क्या करें। महाविष्णु के आदेश का पालन कैसे करें? हाथों में हथकड़ियाँ हैं। पैर बेड़ियों से जकड़े हैं। जिनकी जंजीरें मजबूती से जेल की दीवारों से जुड़ी हैं। द्वार पर पहरेदार हैं। मोटे-मोटे ताले दरवाजों पर लगे हैं। वसुदेव हताश हैं भला बाल कन्हैया को गोकुल कैसे ले जायें?

वे व्यथित हैं। मन ही मन प्रार्थना भी करते हैं। 'हे! नारायण!! यह आपने क्या किया। हे! नाथ!! मैं आपको कैसे नन्द गांव ले जाऊँ। पहले मेरी हथकड़ियां व बेड़ियां तो खोली होतीं। नारायण द्वार भी बन्द है। पहरेदार भी सजग खड़े हैं। अभागा वसुदेव कैसे ले जाये आपको! नारायण! यह कैसी परीक्षा ले रहे हो?"

निष्पाप वसुदेव के नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित है। बाहर घने मेघ भी मूसलाधार बरस रहे हैं और जेल की कोठरी के भीतर घनी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

बनकर बन्द करता आया हूं। कंस ने भी तो निरपराध निष्पाप वसुदेव देवकी को अपने हित के विपरीत जान कर जेल में बन्द किया। मैं भी तो सत्य और न्याय के निर्णयरूपी पुत्र को, मेरे तथाकथित स्वजनों के हितों के विपरीत जानकर असत्य की जेल में न जाने कितनी बार फांसी दे आया हूं। कंस का तो एक ही पाप था, परन्तु मेरे ? गोपाल ! गिन न पाऊँगा। वासुदेव! इस अधम को इसके भीतर छिपा कंस दिखाने के लिए ही तुमने लीला रची है। तुम्हारी लीला के दर्पण में आज, मैं मेरे ही असंख्य स्वरूपों को देख रहा हूं। मिथ्याभिमान और मोहान्धता का पाप–हे निष्पाप ! तुम्हारी लीला रूपी दर्पण में निज को देख पिघल रहा है। रे मन ! कंस स्वरूप को त्याग। निर्मल हो। भज ! गोविन्द हरि।

समय फिसल रहा है। हथकड़ियों बेड़ियों से जकड़ हुए पवित्र वसुदेव असहाय थके हुए गर्दन घुमाकर अचेत देवकी की ओर देखते हैं। उनका मन तड़प कर चीत्कार कर उठता है "हा ! देवकी मैं तुझे यही सब कुछ तो दे पाया ! हर बार तू मां बनी ! जी भर के निहार भी न सकी और उसकी महीन चीख के साथ तू अचेत हुई। अपने ही भोले निरपराध शिशु के छितराये हुए मांस के लोथड़ों को मैं अपने हाथों बटोर भी तो न सका। मेरे और तुम्हारे स्वप्नों के देवता वे अबोध शिशु, निरपराध ! टुकड़ों में छितराते रहे। स्वप्न सजने से पहले ही चूर-चूर होते रहे। मैं असहाय, मौन, कायर की भांति देखता रहा। काश मैं तुझे विवाह के न लाया होता अथवा कंस के साथ समझौते के स्थान पर मृत्यु को स्वयं वर लिया होता। हा ! वसुदेव ! एक असहाय निष्पाप पवित्र अबला की रक्षा भी न कर पाया। धिक्कार है ऐसे क्षत्रियत्व पर। जिसके शौर्य को शत्रुओं ने सराहा। वही महारथी ... . ।

तभी जेल की कोठरी अलौकिक प्रकाश से जगमग हो उठती है। वसुदेव चौंक कर अपनी वोझिल पलकों को ऊपर उठाते हैं तो क्या देखते हैं ? चतुर्भुज भगवान महाविष्णु जेल की कोठरी में प्रकट हो गये हैं। शंख, चक्र, गदा, पद्म से सुशोभित उनकी मनोहारी छवि को देख कर वसुदेव असीम शान्ति एवं शक्ति का अनुभव करते हैं। वसुदेव नारायण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

को प्रणाम करते हैं। हथकड़ी से जकड़े हाथों को जोड़कर महाविष्णु की ओर बढ़ने का प्रयास करते हैं परन्तु पैरों की बेड़ियां उन्हें आगे नहीं बढ़ने देतीं और वे लड़खड़ा कर गिर पड़ते हैं। हथकड़ी और बेड़ियों से जकड़े वसुदेव दूर से ही महाविष्णु को प्रणाम करते हैं। उनके नेत्रों से अश्रु धारा अविरल आवेग से प्रवाहित हो उठती है। स्तुति भी ठीक से नहीं कर पाते हैं। जैसे अपने स्वजन को देखकर, लम्बे समय से प्रताड़ित किया जाता बालक फफक कर रो उठता है। आज वही दशा पवित्र वसुदेव की भी है। महाविष्णु वसुदेव को सांत्वना देते हुए कहते हैं, "वसुदेव ! तुम्हारी पीड़ाओं को समाप्त करने हेतु, पापी कंस के पाप के भार से धरा को मुक्त करने के लिए, धर्म एवं सत्य की पुनर्स्थापना के लिए, मैं शीघ्र ही प्रकट होने वाला हूं। जब मैं देवकी के गर्भ से नवजात शिशु के रूप में प्रकट हो जाऊँ तब तुम मुझे कंस के आने के पूर्व ही एक टोकरी में रखकर और टोकरी को सिर पर रखकर नन्द बाबा के यहां छोड़ आना तथा वहाँ से योगमाया को ले आना।"

वसुदेव ने कहा—"जो आज्ञा।"

महाविष्णु अन्तर्ध्यान हो गए। तभी देवकी को प्रसव हुआ और नवजात शिशु के रूप में नारायण प्रकट हो गए। देवकी अचेत है। वसुदेव कर्त्तव्य बोध से व्यथित हैं। वे कुछ समझ ही नहीं पाते कि अब क्या करें। महाविष्णु के आदेश का पालन कैसे करें? हाथों में हथकड़ियाँ हैं। पैर बेड़ियों से जकड़े हैं। जिनकी जंजीरें मजबूती से जेल की दीवारों से जुड़ी हैं। द्वार पर पहरेदार हैं। मोटे-मोटे ताले दरवाजों पर लगे हैं। वसुदेव हताश हैं भला बाल कन्हैया को गोकुल कैसे ले जायें ?

वे व्यथित हैं। मन ही मन प्रार्थना भी करते हैं। 'हे ! नारायण !! यह आपने क्या किया। हे ! नाथ !! मैं आपको कैसे नन्द गांव ले जाऊँ। पहले मेरी हथकड़ियां व बेड़ियां तो खोली होतीं। नारायण द्वार भी बन्द है। पहरेदार भी सजग खड़े हैं। अभागा वसुदेव कैसे ले जाये आपको ! नारायण ! यह कैसी परीक्षा ले रहे हो ?"

निष्पाप वसुदेव के नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित है। बाहर घने मेघ भी मूसलाधार बरस रहे हैं और जेल की कोठरी के भीतर घनी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भौंहों के नीचे बन्द, पलकों में दो नेत्रों से गंगा-यमुना सी अश्रुधारायें अविरल प्रवाहित हैं। बाहर भी भयानक तूफान है और वसुदेव का स्नायुमण्डल भी भयानक तूफान के प्रचण्ड थपेड़ों में दहल रहा है। अब क्या हो ? वसुदेव तू कैसे ले जायेगा नवजात शिशु को नन्द गांव ? नारायण यह कैसी लीला है तुम्हारी ?

जेल की कोठरी में बधा वसुदेव सोच रहा है। संसार की मोह रूपी कोठरी में लिप्सा-वासना की हथकड़ियों से, मोह, अहं अज्ञान की बेड़ियों से जकड़ा यह जीव सोच रहा है। काम, क्रोध, लोभ के पहरेदार खड़े हैं। स्वामित्व की संकीर्णता के ताले जड़े हैं। कैसे चलें प्रभु की राह। "वसुदेव ? हे निष्पाप ! तुम इस लीला दर्पण में मुझे मेरा मोह अज्ञान ही तो दिखा रहे हो। रोम-रोम में कंस ने बांध रखा है मुझको ? तभी तो गोपाल ? तुम्हारी राह एक क्षण एक कदम भी तो नहीं चल पाया हूं। पहले इन लिप्साओं-इच्छाओं की पूर्ति हो। तथाकथित स्वजनों का शादी ब्याह हो। फलाँ-फलाँ कार्य पूर्ण हो तो निवृत होकर प्रभु का चिन्तन करूँ।

इसी में तो यह जीव बंधता चला गया। वसुदेव ! यही लीला ही तो दिखा रहे हो तुम ! मुझको मेरे अज्ञान से साक्षात्कार करवा कर, हरि प्राप्ति के दिव्य मार्ग में समाधान दिखाने के लिए ही तो आज कंस की कोठरी में दुःख से पिघल रहे हो तुम ! मैं भी तो वासनाओं की कोठरी में बंधा गोपाल ! तुम्हारे लिए पिघल रहा हूं। मेरा रूप दिखाया तुमने ! अब समाधान भी दिखा दो ! हे महान ! रोम-रोम से तुम्हें शत-शत प्रणाम करता हूं। मेरे दिव्य मार्ग दर्शक बनो। मुझे गोपाल से मिलने की राह दिखा दो। जेल से छूटने का मन्त्र बता दो।

वसुदेव ने सोचा कि दुःखी होने से कुछ न होगा नारायण की आज्ञा का अनुसरण कर। यही उचित है। तू ईश्वर द्वारा बताये आदेश का पालन कर। फल देना उनके अधिकार में है। उन्होंने कहा था कि मुझे टोकरी में रख लेना और टोकरी को सिर पर रख लेना। चलो पहले इतना ही करूँ। ऐसा सोचकर पवित्र वसुदेव ने बाल कन्हैया को हथकड़ी लगे हाथों से उठाकर टोकरी में रख लिया। फिर टोकरी को उठाकर सिर पर रखा फिर मालूम है क्या हुआ ???

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हथकड़ियाँ व बेड़ियाँ स्वत: खुल गईं। पहरेदार सो गए। जेल के द्वार पर जड़े ताले खुलकर नीचे गिर पड़े और फाटक अपने आप खुलते चले गए। विस्मय और आनन्द से भरे वसुदेव अपने नन्हें वासुदेव को सिर पर रखे बाहर चल दिए। संसार सो रहा था। वसुदेव जागृत गोकुल की ओर बढ़े जा रहे थे। जब भी प्रभु प्रकट होते हैं विषयी सो जाते हैं। अनन्य भक्त जागते हैं वे ही उनका दर्शन पाते हैं तथा ईश्वरीय आज्ञाओं का पालन करके पुन्य को प्राप्त होते हैं। विषयी, कथा में भी सोते हैं शोर करते हैं। भक्त एकाग्र ध्यान से कथा अमृत का श्रवण करते हैं। कुछ देखा तूने ? कुछ समझा ? क्या ?

जब साक्षात नारायण प्रकट हुए थे तब भी वसुदेव की हथकड़ियाँ और वेड़ियां नहीं खुलीं। परन्तु जब नन्हें गोपाल को सिर पर रखा तो ! हथकड़ियां और बेड़ियां खुल गईं ! पहरेदार सो गए। ताले खुल गए। यही है समाधान। देख लीला दर्पण में ! इतना ही तो तू न कर सका। जब वसुदेव जैसे निष्पाप की हथकड़ी साक्षात महाविष्णु के दर्शन से नहीं खुली तो तेरी हथकड़ियाँ मन्दिर में मात्र दर्शन और फूल चढ़ावन से कैसे खुल जाती ? सोच रे ! भोले भक्त विचार कर !

जब बाल कन्हैया को उठाकर सिर पे रखा तो हथकड़ियां और बेड़ियां खुल गईं। सिर रूपी टोकरी में कृष्ण रूपी विचार को विराज ले। हथकड़ियां और बेड़ियां संसार की खुल जायेंगी। इस सिर रूपी टोकरी में कृष्ण को स्थान कहाँ है ? इसमें भरा है सारे संसार का मोह, छिद्रान्वेषण, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या-द्वेष, घृणा, काम, मेरा-तेरा, अपना-पराया ! आह ! सारे संसार की गन्दगी का कूड़ादान तो मेरा मस्तिष्क बना है। इसीलिए तो गोपाल का मुझसे मिलन न हुआ। मस्तिष्क रूपी टोकरी में बाल कन्हैया को रखना था और बसाए था संसार के कीचड़ को। कैसे खुलतीं यह हथकड़ियां ? इसीलिये तो मोहान्धता रूपी कंस मेरी प्रभु भक्ति रूपी विचार को हर बार नवजात अवस्था में मारकर मुझे संसार दल-दल में खींच लै गया। मैं असहाय फिर जेल की कोठरी में बंधा था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हे नाथ ! यही तो तुम्हारी लीला का रहस्य है। लीला के दर्पण में जीव को उसका सही रूप स्वरूप दिखाकर उसका अज्ञान मिटा कर उसे समाधान का सहज सूत्र बताकर, उद्धार करने हेतु ही तो लीला-धाम ! तुम हर युग के अन्तराल में प्रकट होते हो ! हे दयानिधान ! हे दीनबन्धु !! पतित पावन इस पतित के उद्धार हेतु ही तो लीला की तुमने ! फिर भी न जागूं। तुम्हारी राह न चलूँ, तो धिक्कार है मुझको! जो आज न जागा–वह कभी न जागा ! रे मन ! भज प्यारे गोपाल ! कृष्ण को मन की टोकरी में विठा ले। हथकड़ियाँ-बेड़ियां सव खुल जावेगी। संसार सागर से तर जायेगा ! गोविन्द हरि !

विस्मय आनन्द और प्रभु की सेवा के भाव से वसुदेव का रोम-रोम पुलकित है। मन में अल्हड़ किशोर की तरंग है। स्फूर्ति, शक्ति और उत्साह उनके रोम-रोम से प्रस्फुटित हो रहा है। उन्हें लगता है वे दौड़ कर गोकुल पहुंच जायेंगे। लम्बी जेल की थकान ! टूटन सब कुछ समाप्त है। वसुदेव जैसे पुनः किशोर अवस्था को प्राप्त हो गये हैं। वाल कन्हैया की सुन्दर छवि को मन में वसाए, नेत्रों में समाए, रोम-रोम में रसाय, टोकरी को सिर पर रखे उन्हीं का स्मरण करते, भय-मुक्त वसु-देव चल दिये ! हर ओर आनन्द ही आनन्द है। वसुदेव का सौभाग्य जागा है। परम अलौकिक, दिव्य आनन्द, जिसकी एक बूंद को सन्यासी ऋषि, भक्त तरसते हैं। वसुदेव आज आनन्द के सागर में आनन्दित किलोल करते हैं। उन्हें देवकी की चिन्ता नहीं ! पहरेदारों के जागने का भय नहीं है। चिन्ता और भय की चर्चा ही व्यर्थ है। वसुदेव ने कृष्ण रूपी विचार को सिर की टोकरी में रख लिया है। अव संसार की सुध ही कहाँ है।

जिसने हथकड़ियाँ-बेड़ियाँ काटीं, जिसका संसार है यह, जिसने वसुदेव व देवकी को बनाया, उन्हीं की सेवा में डूबे वसुदेव को देवकी अथवा संसार की चिन्ता कहाँ ! मैं ईश्वर द्वारा दिये कर्म को, भक्ति, श्रद्धा, सावधानी और ईमानदारी से उन्हीं का होकर, उन्हीं के निमित्त, ऐसा मानकर करूं ! फल वे जाने ! यही तो वसुदेव लीला द्वारा दिखा रहे हैं। चल रे जीव ! इस अमृतमय मन्त्र को जीवन में धारण कर !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

जन्माष्टमी का मज़ा ले ! बाल कन्हैया को विचारों में जन्म दे ! सिर रूपी टोकरी में; संसार रूपी गन्दगी से मुक्त और पवित्र करके, वाल कन्हैया को धारण कर और वसुदेव की भांति मस्त होकर उद्देश्य और कर्त्तव्य को धारण कर ! फल की चिन्ता एवं सुधि से मुक्त होकर आनन्द के सागर में झूम-झूम कर नहा ! वसुदेव की लीला रूपी अमृत से जीवन के हर क्षण को सींच ! आज जन्माष्टमी है। देह रूपी देवा-लय को सजाकर कृष्ण को प्रकट कर ! फिर मून्द के आँख झाँकी का आनन्द ले।

वसुदेव आनन्द मग्न गोकुल को जा रहे हैं। भीषण तूफान और वर्षा उन्हें भयभीत नहीं कर पाते हैं। पानी की तेज धारें उन्हें आनन्द दे रही हैं। उन्हें लगता है प्रभु कृपा का अमृत उन्हें सींच रहा है। भयंकर तूफान की तेज दहाड़ती आन्धियां, मन्द-सुगन्धित समीर सी उन्हें लगती है। अब कोई भी भौतिक तूफान विषय उस जीव को दुःखी न कर पायेगा, जिसने टोकरी में गोपाल बसा लिये हैं ! जो संसार के तूफानों में भयभीत है, उसने गोपाल को टोकरी में नहीं बसाया है। वह भक्त और भक्ति के मर्म को नहीं जानता है। उसने लीला रस का पान अभी नहीं किया है।

लीला दर्पण में निज को नहीं देख पाया है। भक्त वही है जो कृष्ण रूपी विचार से कभी विभक्त न हो। भक्त नित्य सुखी है। नित्य भयमुक्त है ! नित्यानन्द को प्राप्त है। संसारी सदा दुखी, भयभीत, अभाव और कष्ट को प्राप्त है। यही संसारी और भक्त का भेद है। स्वयं देखो कि तुम भक्त हो अथवा संसारी। लीला दर्पण में अपने स्वरूप को पहचानो। गोविन्द हरि !

यमुना में बाढ़ भयंकर है। क्या वह वसुदेव की परीक्षा लेगी। कदापि नहीं ! यमुना जानती है जो एकीभाव से कृष्ण में स्थित है उसकी परीक्षा हो ही नहीं सकती। वह तो परीक्षक, और परिस्थिति में भी कृष्ण को ही देखेगा। उसकी परीक्षा लेना असम्भव है यमुना उसकी टोकरी में विराज रहे पावन कृष्ण रूपी नवजात विचार के पवित्र चरणों का स्पर्श सुख चाहती है। परीक्षक और परिस्थितियाँ भी सच्चे भक्त की परीक्षा न लेकर उसके चरणों में नत मस्तक होती हैं। तभी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

तो प्रभु ने कहा कि भक्त भगवान से भी बड़ा है तथा भावना भक्त और भगवान दोनों की माँ है। भावना बनाओ। प्रभु रूपी कृष्ण को इस देह रूपी देवालय में भावना के गर्भ से प्रकट कर प्रतिष्ठित करो। जन्माष्टमी मनाओ।

वसुदेव गोकुल आये हैं। यशोदा ने योगमाया को जन्म दिया है। सारा गोकुल सो रहा है। किसी को भी कुछ भान नहीं है। जेल में प्रभु प्रकट हुये तो विषयी पहरेदार सो गये। गोकुल में योगमाया प्रकट हुई तो सारे पवित्र भक्त सो गये। जहाँ प्रभु प्रकट होते हैं। विषयी संसार सो जाता है। भक्त जागते हैं। जहाँ माया प्रकट होती है वहाँ भक्त सो जाते हैं विषयी संसार जागता है।

गोकुल के पशु पक्षी मनुष्य सब भक्त हैं इसलिए सो रहे हैं। वसुदेव भी सो जाते परन्तु उनके सिर पर बाल कन्हैया हैं इसीलिये सो नहीं पाते हैं। वसुदेव बाल कन्हैया को यशोदा पास लिटा देते हैं और योगमाया को सिर पर रखकर तत्क्षण वहाँ से चल देते हैं। योगमाया के सिर पर आते ही वसुदेव को संसार सुधि होती है। देवकी की चिंता सताने लगती है। कंस का भय सताने लगता है। वे शीघ्र चल देते हैं। नन्द बाबा से मिलने की सुधि भी मिट जाती है। पहले बाल कन्हैया सिर पर थे तो आनन्द सागर में मस्त थे। इसलिए सो नहीं पाये। अब योगमाया सिर पर हैं तो संसार चिन्ता से व्यथित है इसलिए सोना तो दूर रुकना भी असम्भव है। वे भागे जा रहे हैं। हे लीलाधाम प्रणाम।

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः॥

बाल कन्हैया के यशोदा की बगल में लेटते ही नन्द बाबा और यशोदा सुन्दर मधुर अलौकिक स्वप्न दर्शन के अमृतमय आनन्द को प्राप्त होकर जागृत अवस्था को प्राप्त होते हैं। आनन्द का सागर लहराने लगता है। बाल कन्हैया अपने प्यारे भक्त समुदाय को जगाने से पूर्व स्वप्न में दर्शन का परम आनन्द देकर उन्हें जागृत दर्शन हेतु प्रेरित करते हैं। भक्त वही है जिसे जागृत और स्वप्नावस्था दोनों में ही प्रभु दर्शन की प्राप्ति हो। आनन्द ही आनन्द है। पेड़ पौधों पर हरित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

क्रान्ति है। फल फूलों से डालियाँ लदने लगी है। पक्षियों के आनन्द कलरव से वातावरण अति मधुर अलौकिक हो उठा है। गन्धर्व और किन्नरों को भी लजा दे, ऐसा मधुर कलरव पक्षी करने लगे हैं। गौओं और बछड़ों ने खूंटे उखाड़ दिये हैं। रस्सियां टूट गयी हैं। सब मस्त होकर नाचने लगे हैं। गौओं की बात कौन करे कुंआरी बछियों के स्तन से दुग्ध धारायें प्रवाहित हो रही हैं। जहाँ कुंआरी बछिया भी अपने स्तन से दूध गिरावें वहाँ प्रभु का वास जानो। गोप और गोपियाँ यशोदा से मिलने दौड़ी जा रही हैं। किसी ने स्वप्न में ही उन्हें दर्शन देकर कहा कि मैं यशोदा के यहाँ आ गया हूँ। वे दौड़े जा रहे हैं। नन्द हैरान हैं। इनको बताया किसने कि मेरे घर बाल कन्हैया प्रकट हुए हैं? मैंने तो अभी किसी को सूचना भी नहीं दी है! इन सबको पता कैसे चल गया?

दूसरी ओर वसुदेव जी शीघ्रता से भागते हुए कंस की जेल में प्रवेश पाते हैं। पहरेदार अभी सो रहे हैं। जैसे ही वे भीतर आते हैं द्वार स्वतः बन्द हो जाते हैं। ताले भी अपनी पूर्व स्थिति को प्राप्त होते हैं। हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ दौड़कर उनके हाथों और पैरों से लिपट जाती हैं। जकड़ जाती हैं। वसुदेव पुनः जेल में कैद हो जाते हैं। माया पहरेदारों को स्वप्न में उपहार का भौतिक स्वप्न देकर उठाती है। माया आयी विषयात्मक जगत जाग उठा! थके हुये वसुदेव दीवार से पीठ लगाकर निद्रा निमग्न हो जाते हैं। माया आयी! भक्त उन्नीदे हुये। पापी और विषयी जाग उठे। पहरेदार दौड़े। कंस को सूचना दी। देवकी का आठवां प्रसव हो गया है। मोहान्ध विषयी हरिद्रोही कंस हड़बड़ाकर उठ बैठा। जेल की ओर दौड़ा। अपने काल को समाप्त करने के लिए।

रे मन झांक इस लीला दर्पण में! कृष्ण रूपी विचार जब बुद्धि रूपी टोकरी में स्थित हुआ तो संसार रूपी जेल का अस्तित्व समाप्तप्राय हो गया। विषय वासना, अज्ञान इत्यादि की हथकड़ियां और बेड़ियाँ खुलीं। द्वार खुल गये। वसुदेव स्वतन्त्र होकर आनन्द के सागर में झूमने लगा। परन्तु योगमाया जब सिर पर आयी तो पुनः जेल में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

बन्दी बना हुआ था। जिस क्षण कृष्ण रूपी विचार मन से उतर गया और संसार रूपी योगमाया आयी, तू फिर बन्दी है, विषय वासना, मोह आसक्ति और मिथ्याभिमान की जेल में। वसुदेव के सिर पर जब कृष्ण थे तो आनन्द था। जब कृष्ण हटे और योगमाया आयी तो चिन्ता थी, भय था और थकान से टूट रहा था। कृष्ण हमें दुःख, पीड़ा और भय से छुड़ाकर अलोकिक आनन्द देते हैं और सांसारिक मायायें भय पीड़ा, दुःख, चिन्ता, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, रोग, घुटन और बन्धन ! रे पतित ! फिर भी संसार माया की ओर भाग रहा है अपने हित में भी जब तू इतना अन्धा है तो जिनके लिए भाग रहा है उनका क्या हित करेगा तू ? जिन्दगी के नाम पर मौत, सुख के नाम परदुःख, आनन्द के नाम पर पीड़ा, स्वतन्त्रता के नाम पर घुटन भरी गुलामी ही तो अपने और अपने स्वजनों के लिए बटोर रहा है। जिसने अपने हित को ही नहीं जाना वह मूर्ख अपने स्वजनों के हित की कल्पना का ढोल बाँधे उनका भी सर्वनाश ही ढूँढ़ रहा है। शीश रूपी टोकरी में सदा-सदा के लिए कृष्ण रूपी विचार को बैठा ले। गोविन्द हरि !

समय फिसल रहा है। हम सब जन्माष्टमी के पावन पर्व पर श्री सनातन आश्रम में एकत्र हुए हैं। गोपाल की सम्पूर्ण लीला का चिन्तन करने के लिए एक जन्म तो क्या अनेक जन्म थोड़े हैं। इसीलिए तो भक्त वारम्वार लीला आनन्द पान की कामना करते हैं। समय से पूर्व ही कथा का समापन करना है। इसलिये जिसका अति विस्तार भी संक्षेप ही है क्योंकि उसके अतिरिक्त इस संसार में कुछ है ही नहीं। उस संक्षेप को भी अति संक्षेप में आप सबके सम्मुख रखता हूं। ध्यान, भावना एवं भक्ति पूर्वक सावधान होकर ग्रहण करें। श्री भगवान ने गीता में कहा है कि कोई भाग्यवान ही उनकी कथा का श्रवण कर सकता है। ऐसे सुनने वालों में भी कुछ ही ऐसे भाग्यवान होते हैं जो उस कथा में मर्म रूपी अमृत को पाकर आनन्दित होते हैं तथा ऐसे मर्मज्ञों में से थोड़े ही वे लोग हैं जो उस अमृतमय ज्ञान को जीवन में उतारकर अर्थात् आचरण करके ईश्वर को प्राप्त हों ! ईश्वर करे ! हम सब ऐसे महा सौभाग्य को प्राप्त हों। हम सब सावधान होकर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE 2025-Grant

वासुदेव की कथा का श्रवण करें। आचरण करें और सदा-सदा के लिये कृष्णमय हो जावें। गोविन्द हरि !

द्वापर युग समाप्ति की ओर भाग रहा था। राजा उग्रसेन के पुत्र कंस ने अपने पाप और अत्याचार से धरती को त्रस्त कर दिया था। अपने पिता उग्रसेन को उसने जेल में डाल दिया था। पाप, अनाचार, अत्याचार, लूट, सताना यही उसका काम था। बहन का विवाह उसने वसुदेव के साथ किया। परन्तु जब उसे पता चला कि वसुदेव-देवकी की आठवीं संतान उसकी मृत्यु का कारण होगी तो नारद द्वारा उकसाये जाने पर उसने वसुदेव देवकी को जेल में डाल दिया और उनके प्रत्येक प्रसव को नष्ट करने लगा। सातवें गर्भ के रूप में बलराम को प्रकट होना था वे प्रभु की लीला द्वारा रोहिणी जो कि वसुदेव की दूसरी पत्नी थी तथा जो उनके मित्र नन्द की पत्नी यशोदा के साथ रह रही थी, उन्हीं के पास पहुँचा दिए गए और बलराम के स्थान पर नवजात मृत शिशु के शव को कंस को दिखा दिया गया कि देवकी की सातवीं सन्तान मृत हुई है उसके उपरांत आठवें गर्भ भी लीला का हम अभी चिन्तन कर आए हैं।

कंस ने सुना देवकी का आठवाँ गर्भ प्रकट हो गया है। वह दौड़कर जेल में आया। देवकी के बगल से (योगमाया जो कि कन्या रूप में प्रकट हुई थी) उसकी संतान को निर्ममता पूर्वक उठा लिया। भय से देवकी के और घृणा से वसुदेव के नेत्र मुंद गये। कंस ने देखा कि आठवीं संतान पुत्र न होकर कन्या है तो वह ठठाकर हँसा ! भला कन्या मुझे क्या मारेगी ? उसके दम्भपूर्ण ठहाकों से जेल की दीवारें दहल उठीं ! उसने उस कन्या को शिला पर पटक कर चकनाचूर करना चाहा। परन्तु योगमाया उसके हाथ से फिसल गयी। योगमाया ने कंस के सिर पर कस के लात मारी और गगन में जाकर स्थिर हो गई। उसने पुकार कर कहा, "रे पापी ! तेरा काल प्रकट हो गया है ! आज से ग्यारहवें वर्ष तू उसके द्वारा मृत्यु को प्राप्त होगा।" यह कहकर योगमाया अन्तर्ध्यान हो गयी। कंस ठगा सा, हताश, हाथ मलता रह गया ! गोपाल तो गोकुल में अपने प्यारे भक्त समुदाय को अलौकिक आनन्द रूपी रस से सींच रहे थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE 2025-Grant

देखा तुमने ! कंस ने योगमाया से लात खाई। कंस योगमाया का कुछ भी न बिगाड़ पाया। फिर भी हम कंस की भाँति योगमाया के झांसे में आकर अपने जीवन को प्रतिक्षण नष्ट करते हैं। जो अपने तथा अपने स्वजनों के तथाकथित हित में अन्धा होकर सत्य रूपी वसुदेव और न्यायरूपी देवकी को झूठ की जेल में बन्द करके, सत्य और न्याय के पुत्र "निर्णय" की हत्या करने की कल्पना करता है। वही योगमाया द्वारा निरन्तर लातें खाता हुआ, जगत में अपयश और धिक्कार का भागी बनता अपने ही आत्मा रूपी कृष्ण द्वारा; वह आत्मद्रोही कंस की भाँति, मारा जाता है।

माया तुम्हें सदा लातें ही मारती है। मकान की माया में फंसे तो लातें खायी। आज कौन सुखी है? हर गृहस्थ रो रहा है। क्यों? क्योंकि माया उसे संसार के प्रत्येक स्तर पर लातें लगा रही है। जहां सुख ढूंढा वहीं दुख मिला। माया लातें मारकर तुम्हें जगा रही है कि मूर्खों यहां सुख नहीं है सुख वहां है जिसकी मैं चेली हूं। विषय, वासनाओं में पड़े कंस को मैं सदा लातों से पीटती हूँ परन्तु नन्दगाँव में बसे सम्पूर्ण जीव मात्र को मैं असीम आनन्द देती हूं। मुझसे वही बचता है जो मेरे प्रभु को अपने मस्तिष्क रूपी टोकरी में सदा-सदा के लिए रख लेता है। जिसके मस्तिष्क में मेरे प्रभु आसीन होते हैं उसे मैं पुत्रवत प्यार, स्नेह एवं आनन्द प्रदान करती हूँ। जिसे मेरे प्रभु प्यार करते हैं उसकी सुख सुविधा की देखभाल मैं सजग होकर प्रतिक्षण करती हूँ। जो मेरे प्राण प्रिय प्रभु के विपरीत कंस बनता है उसकी सेवा में लातों से करती हूँ। हे लतखोरी लाल ! भज गोपाल।

प्रभु जेल में वसुदेव और देवकी के दाम्पत्य को वरद करने हेतु प्रकट होते हैं। परन्तु उनकी लीला का आनन्द नन्द और यशोदा उठाते हैं। इसका क्या रहस्य है?

वसुदेव कहते हैं सूर्य को। जिसका दूसरा अर्थ आत्मा है। देवकी कहते हैं ब्रह्म ज्वालाओं को। आत्मा वसुदेव और आत्म ज्वाला अर्थात् ब्रह्माग्नि देवकी। विषयासक्त मन ही तो कंस है जब मन विषयासक्त होकर कंस बना बाहर भटकने लगा तो यह शरीर आत्मा रूपी वसुदेव और आत्मज्वाला देवकी के लिए जेल ही तो बन बैठी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अब विचार करो ! क्या तुम थाली भर भोजन से अंगुली का एक टुकड़ा बना सकते हो ? नहीं ! तो फिर बालक तुमने कब बनाया ? आत्म ज्वाला देवकी और आत्मारूपी वसुदेव आज भी घट-घट वासी होकर प्रत्येक शरीर में बालक को उत्पन्न करते हैं। जब बालक उत्पन्न हो जाता है तभी तो वह जीव, नन्द और यशोदा की भांति उसका लालन-पालन करते हैं। नन्द उसी को कहेंगे जो सबको आनन्द दे। आए नन्द तो हो आनन्द (आ+नन्द)। यशोदा अर्थात् यशदायिनी। जो दूसरे को यश दे तथा जो शुभ आचरण तथा ज्ञान द्वारा बालक के जीवन को यशस्वी बनावें— वही तो यशोदा होगी।

लीला-दर्पण में रूप मेरा, मुझे ही दिखा रहे हो गोपाल ! इस मिथ्याभिमानी को सत्य का दर्शन कराने हेतु ही तो हे देव ! तुमने रहस्य लीलाओं की सृष्टि की। जब बोरी भर राख से एक समय का भोजन (पेड़ों की शरण हुए बिना) न बना पाया। पेड़-पौधों के गर्भ में यज्ञों के द्वारा तुम ही बूढ़े तन की राख को सुन्दर फलों आदि में तथा उन फलों को नाना जीवधारियों की देह में, यज्ञों द्वारा उनकी संतानों में प्रकट करते हो। फिर भी यह अज्ञानी मिथ्याभिमानी जीव मोहान्ध मदान्ध ! जाने क्यों "मैं पेट भरता हूं। यह मेरा बेटा है ! यह मेरा है ! वह पराया है !" ऐसी असत्य और अन्धता से नहीं छूट पाता है। इसी पाप में भटका, कंस का सामीप्य और सानिध्य लेकर, कंस बना, अपने जीवन को नष्ट कर देता है ? छूट जाता है सत्य से ! जो सत्य से छूटा वह कैसे पाये तुमको ! हे यज्ञेश्वर ! हे घट-घट वासी तुम यूं हर ओर हर क्षण लीला करते, वसुदेव और देवकी के गर्भ से, इस देह रूपी जेल में प्रकट हो रहे हो ! मन कंस कैसे पहचाने तुमको ! धन्य होंगे वही दम्पत्ति जो नन्द और यशोदा बन सचराचर में तुम्हारी लीलाओं के परम आनन्द को प्राप्त होंगे। तुम्हारी लीलाओं को वेद भी गाकर परम धन्य होते हैं।

अक्षितोतिः सनेदिमं वाजमिन्द्रः सहस्त्रिणम्।
यस्मिन् विश्वानि पौंस्या ,।

(ऋग्वेद १/५/९)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सीपी में बन्द मोती की भाँति हे प्राण ! मैं देखता हूं तुमको ! जैसे सीपी में जगमगाता हुआ मोती छिपा रहता है। जैसे बन्द पलकों में प्यारी पुतली छिपी रहती है उसी प्रकार सचराचर में, पेड़-पौधों में, पशु-पक्षियों में, मनुष्यों में, सम्पूर्ण देहधारियों में, जगमगाते सुन्दर मोती की भाँति; आत्मा होकर तू विराज रहा है। हे प्राण ! हे जगमगाते मोती। मैं देखता हूं तुझे अब प्रत्येक सीपी (देह) में। क्या करते हो तुम ? यज्ञ करते हो ! आत्मज्वालाओं में प्रतिक्षण ! जिससे क्षण-भंगुर संसार, वारम्वार, जड़त्व को त्यागता, जीवन्त धाराओं को प्राप्त होता है। भस्मी पुनः फल और फल पुनः नाना जीवधारियों में जीवन्त हो उठते हैं। यही वसुदेव और देवकी की लीला है। हर ओर ! सर्वत्र ! प्रति क्षण ! गोविन्द हरि !

यही सृष्टि की उत्पत्ति का रहस्य है। प्यारे भक्त गण ! जिन्हें आप रासलीला कहते हैं। उनका पूर्व का नाम था रहस्य-लीला। कालान्तर में रहस्य का अपभ्रंश 'रहास' बना ! फिर 'रहास' लीला से रासलीला और रसलीला हो गया। जीवन के विभिन्न रहस्यमय पहलुओं को नाटकीय ढंग से दर्शाने की लीला को रहस्य लीला कहते थे। भगवान वेदव्यास की लीलाओं में वेद के रहस्यों को बहुत ही सरल और मधुर ढंग से दर्शाया गया है। लीला विस्तार आज सम्भव न होगा। इसलिए अभी आप प्रभु लीलाओं में कुछ ही लीलाओं को अति संक्षेप में जाने। पुनः समय-समय पर लीलाओं का विस्तार कथाओं में करेंगे। घड़ी की सुइयाँ भाग रही हैं। अभी नन्हें कन्हैया का प्राकट्य होगा आनन्द होगा ! गोविन्द हरि !

जब कंस ने सुना कि उसका काल गोकुल में सुख से पल रहा है। तो बहुत उदास हो गया। कंस की दो पत्नियाँ हैं ! 'अस्ति' और 'प्राप्ति'। वे अपने पति की सेवा में रत हैं। दोनों सगी बहनें हैं और जरासन्ध की बेटियां हैं। श्वसुर जरासन्ध की शक्ति से कंस से सब राजा थर्राते हैं कंस का कोई सामना करने का साहस नहीं करता है। आज वही कंस उदास और भयभीत है। उसकी हिम्मत नहीं है कि स्वयं सेना लेकर गोकुल चला जावे और अपने काल बाल कृष्ण का सामना कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सके। 'अस्ति' और 'प्राप्ति' अपने पति को ढांढस बंधाती हैं। कृष्ण तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ पायेगा।

मोहान्धता और स्वामित्व की संकीर्णता ही तो कंस है। जिसने अपने जीवन से यह मिटा दिया उसने कंस को मार दिया। कंस को वही जीव मार पायेगा जो एकीभाव से कृष्ण को अपनी बुद्धि रूपी टोकरी में बिठा लेगा और कभी उतारेगा नहीं। 'अस्ति' का अर्थ है 'होना' और 'प्राप्ति' का अर्थ है 'मिलना' यह मेरा है 'अस्ति'! मुझ यह और प्राप्त हो 'प्राप्ति'! जब एक जीव इन विचारों में बंधा है वह कंस का भक्त है "अस्ति और "प्राप्ति" का बन्धक है चरणदास है। उसको 'भजो राधे-गोविन्द' मात्र स्वयं को दिया गया धोखा है। कंस और उसकी दोनों पत्नियां उसे कृष्ण द्रोही बनाकर भ्रमाती हैं। फिर उसे जरासन्ध के सामने पेश होना पड़ता है। 'जरासन्ध' अस्ति और प्राप्ति के पिता हैं, कंस के श्वसुर हैं। 'जरा' का अर्थ है बुढ़ापा और दूसरा अर्थ है जीर्ण होना। कमजोर होना। 'सन्ध' माने सन्धि! जरासन्ध का अर्थ हुआ बुढ़ापा जो तुम्हारी सन्धियों अर्थात् शरीर के जोड़ों को तोड़ दे। पहले कंस बांधता है। मिथ्याभिमानी बनाता है। फिर 'अस्ति' और 'प्राप्ति' उसे गुलाम बनाकर भ्रमाती है। बन्दर की तरह नचाकर आनन्दित होती हैं। जीव कंस और कंस पत्नियों का मनोरंजक खिलौना बनके रह जाता है, मेरा और मुझे मिले इसकी चिन्ता में नष्ट होने लग भय, आतंक, संदेह, विषय-वासनाएं; जरासन्ध के गण बनकर उसे नष्ट करने लगते हैं। देह क्षीण होने लगती है। देह के जोड़ टूटने लगते हैं। जिन्दगी अस्पताल बनने लगती है। मुस्कराता है 'जरासन्ध'! मेरी बेटियों और दामाद ने मुझे नया खिलौना दिया है, मनोरंजन हेतु! मेरा दामाद मेरा कितना ख्याल करता है और मेरी बेटियां कितनी अच्छी हैं। मुझे कभी भूलती नहीं। मेरे मनोरंजन के लिए नित्य नये खिलौने भेज रहे हैं। मैं अब इनकी सन्धियों को कस के तोड़ूं। जब वे कराहेंगे, तड़पेंगे तो बहुत मजा आएगा! 'जरासन्ध' तोड़ता सन्धियां तुम्हारी और तुम मनाने आए जन्माष्टमी? काश! तुम कृष्ण के हो गये होते! जरासन्ध फिर कैसे तोड़ता सन्धियां तुम्हारी? 'जरासन्ध'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

जब खिलौने ने ऊब जाता हैं तो उसका एक परममित्र है 'कालयवन' उसी के पास टूटे खिलौने भेज देता है। कहता यह है कि "लो मित्र मैंने इनकी संधियाँ तोड़ दी हैं। मनुष्य योनि में रहते हुए भी कुलबुलाते कीड़ों से कहीं निकृष्ट हैं, तुम्हारे आनन्द भोग हेतु इन्हें भेज रहा हूं।"

'काल' का अर्थ है समय और 'यव' का अर्थ है 'वीज' तथा 'न' का अर्थ है नहीं! कालयवन का अर्थ हुआ-समय जो जीव की प्रत्येक उपलब्धि को वीज रहित अर्थात निर्वीज करने वाला है। काल ही तो कालयवन है। जरासन्ध से टूटा और चिता की लकड़ियों पर निर्वीज कर गया कालयवन! रे कृष्ण द्रोही! कभी पहचानेगा इन भयंकर शत्रुओं को जिनकी गोद में खेल रहा है आज! जिनके लिये धरती का अभिशाप बना हुआ है। हे मकान दास, दीवार मल! मेरे प्रभु की राह चल! काश। तुम अपने हित को आंख खोल कर देख पाते तो गोविन्द गोपाल हो जाते! मन में विषयों को नहीं प्यारे कृष्ण को रमाते! कंस, उसकी, पत्नियाँ, जरासन्ध तुम्हें छू भी न पाते, हाथ मलते रह जाते!

हे देव! हे लीलाधाम! इस अधम पापी की रक्षा हेतु ही तो तुम प्रकट हुए और स्वयं को सबसे निरापद कर, मुझे इनसे बचने का मार्ग दिखाया! मेरे प्यार में गोपाल! तुम धरा पर अवतरित हुए और मैं पतित तुम्हें बिसरा कर कंस समुदाय में ही अपना हित ढूंढता स्वयं को नष्ट करता फिरा। तुम फिर भी अपनी लीलाओं द्वारा मुझे रिझाते रहे। सत्य का ज्ञान कराते रहे! कभी बने विष्णु तो कभी बने राम! हर युग में, मैं पतित भटका और फिर मुझे बचाने तुम आये! हे महान! प्रणाम!!!

प्रभु की लीला ही अमृत हैं। जीवन का सत्य है सार है। आज कंस दुःखी है! भयभीत है! उसकी पत्नियाँ भी घबड़ायी हुयी हैं। यदि कंस के काल को वाल्यावस्था में न समाप्त किया गया तो कंस का एक छत्र साम्राज्य नष्ट हो जायेगा। कंस के मरते ही अस्ति और प्राप्ति भी वैधव्य को प्राप्ति होंगी। उनका भी सुख साम्राज्य नष्ट हो जावेगा। वे दु:खी पति को ढाढस वंधा रही हैं। परन्तु स्वयं भी भयभीत हैं। कंस भयातुर हैं! गोकुल पर आक्रमण करके नवजात शिशु को मारने का साहस भी उनमें नहीं है! क्यों न छल के द्वारा बाल कन्हैया को मार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
दिया जावे ! पूतना ! हाँ पूतना राक्षसी तुरन्त कंस के सम्मुख प्रस्तुत हुई। कंस ने पूतना को वाल कन्हैया को दूध में विष देकर मारने भेजा। मायावी स्त्री ने सुन्दरी का रूप धारण कर लिया और अपने स्तन पर विष लगाकर मायाविनी पूतना गोकुल की ओर चल दी।

उधर नन्द के गाँव में आनन्द ही आनन्द है। नन्द वावा को चौथेपन में पुत्र की प्राप्ति हुई है। महाराज दशरथ को भी चौथेपन में ही भगवान श्री रामचन्द्र पुत्र रूप में प्राप्त हुये थे। भगवान चौथेपन में ही क्यों सन्तान सुख देते हैं ? मनुष्य के जीवन को वेद ने चार भागों में वाँट रखा है। वचपन से किशोरावस्था तक पहला, किशोरावस्था से युवावस्था तक दूसरा, युवावस्था से प्रौढ़ावस्था तक तीसरा तथा प्रौढ़ावस्था से बुढ़ापा चौथेपन तक। पहलापन है ज्ञानार्जन का। तव जीव ज्ञान का साक्षात्कार करता है। कच्ची अवस्था है। ज्ञान को पढ़ा तो है परन्तु अभी आचरण द्वारा सिद्ध नहीं किया है। दूसरी अवस्था में ज्ञान को स्थूल रूप से जानने हेतु, गृहस्थ हुआ परिवार को उसी प्रकार धारण करने का रिहर्सल (पूर्वाभ्यास) कर रहा है जैसे नारायण सम्पूर्ण सचराचर को धारण करते हैं। सो अभी भी नाटक का पूर्वाभ्यास ही तो है। तीसरेपन में उसमें प्राणी मात्र को एक गृहस्थी के रूप में सेवा करने की भावना जगी। पहले एक परिवार को धारण करता था अव सचराचर को एक कुटुम्ब जानकर, प्राणीमात्र में नारायण की सेवा में लग गया, सो तीसरापन है। प्राणी मात्र में नारायण की भावना करके सेवा तो कर रहा है। पर अभी भी स्पष्ट रूप से निज स्वरूप को जान नहीं पाया है। चौथेपन में वासुदेव को सचराचर में भजता, उन्हें ही अपने अन्तर्जगत में देखता, समाधिस्थ होने लगा। सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों में नारायण को देखता तथा सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों को नारायण सहित अपने भीतर देखता हुआ, जव उन्हीं में स्थित हो गया तव महाविष्णु बाल रूप धारण करके प्रगट हो गये। यह चौथापन अति दुर्लभ है। जीव काल से बँधा नहीं है इस दुर्लभ चौथेपन की प्राप्ति किसी अवस्था में भी हो सकती है। इस प्रकार विचारों के चौथेपन के परमानन्द को जव जीव प्राप्त होता है तो महाविष्णु (नारायण) पुत्र बनकर उसके आँगन में लीला करते,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
उसके परमानन्द को सहस्त्र गुणा कर देते हैं। नन्द बाबा को भी पुत्र रूप में कन्हैया मिले हैं। शंकर भी उनके दर्शन को तरस रहे हैं। नन्द बाबा सबको प्रसन्न कर रहे हैं। प्रजाजनों को गहने, वस्त्र, अन्न, गाय सब उदार होकर दे रहे हैं। यशोदा आभूषण दोनों हाथों से लुटाये जा रही हैं। जो दूसरों को सुख दे सो 'देवता' जो दूसरों को नोचे सो पिशाच। प्रभु देवता स्वरूप मनुष्यों के यहाँ ही प्रगट होते हैं। देवता मुक्त हस्त से दूसरों को सुख बांटते हैं। नन्द और यशोदा दान कर रहे हैं। कंस स्वभाव से पिशाच है। नन्द स्वभाव से देवता हैं। देवता स्वरूप प्रभु को देखकर आनन्द मग्न होता है। पिशाच स्वरूप मनुष्य भय, ईर्ष्या, द्वेष और घृणा को प्राप्त होता है। दूसरे के सुख वैभव की प्राप्ति से यदि तुम प्रसन्न हो तो तुम देवता स्वरूप हो। दूसरों के सुख और वैभव तथा यश आदि प्राप्त होने पर यदि तुम ईर्ष्या द्वेष आदि से भर रहे हो तो तुम पिशाच स्वरूप हो, सावधानी से स्वयं को पढ़ो। नन्द को आनन्द है कंस को भय और अनिद्रा।

पूतना सुन्दरी का रूप धारण किये ठुमकती हुई आनन्दित होने का नाटक करती बाल कन्हैया के पास जा पहुंची और उन्हें स्तनपान कराने लगी। किसी को भान न हुआ। बाल कन्हैया ने कस कर स्तन को पकड़ लिया और स्तनपान करने लगे। विष का उन पर असर न हुआ। बाल कन्हैया दूध के साथ उस राक्षसी के प्राण भी पीने लगे। पीड़ा से राक्षसी छटपटाने लगी। उसने स्वयं को छुड़ाने के बहुत प्रयास किये लेकिन बाल कन्हैया ने छोड़ा नहीं। विकराल रूप धारण करके पूतना आकाश में उड़ने लगी। बाल कन्हैया ने तब भी नहीं छोड़ा। अन्त में पूतना मर कर धरती पर आ गिरी। पीछे दौड़ती गोपियों ने उसकी छाती से बाल कन्हैया को अलग किया और गोकुल ले चलीं।

'पूत' का अर्थ है पवित्र! और 'न' का अर्थ है नहीं। अपवित्रता ही तो पूतना है। मेरे लीलाधाम। लीला-दर्पण में मैं आज अपना पूतना स्वरूप देख रहा हूं। अपवित्रता ही तो पूतना है। अपवित्रता ही तो प्रभु भक्त-रूपी विचार को विष देकर मुझे संसार सागर में भटका देती हैं। हर बार प्रभु तेरी राह चलने का सङ्कल्प लेता हूं। हर बार तेरी मधुर छांव मेरे मानस पर प्रगट होती है। तभी विषय, भौतिकता, मोह आदि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सहस्त्रों पूतनायें, अपने विष से तुम्हारी मनोहारी छवि को धूमिल कर मुझे संसार सागर में धकेल देती हैं।

पूतना जिये या कृष्ण ? सोच रे मन पापी ! दोनों एक साथ न रह पायेंगे। एक को मरना होगा। ईश्वरीय पवित्र सद्-विचार अथवा विषयासक्त जगत की मोहासक्ति रूपी अपवित्रता ?

विचारों की अपवित्रता ही तो पूतना है। कंस पूतना द्वारा ही तो जीव को बांधता है। उसके देह रूपी देवालय में, कृष्ण रूपी विचार को समाप्त करने तथा पूतना रूपी अपवित्र विचार एवं आचरण को उसकी देह में प्रगट करके; सद्विचारों की हत्या करवा देता है। पूतना से सावधान रहना। माता पिता जब पूतनावत बालक को संस्कार देते हैं तो वे बड़े होकर उन्हें मारते हैं। यशोदा बनो।

रहस्य लीलाओं द्वारा अनपढ़ गांव के लोग अमरत्व पा गये। पढ़े लिखे कूड़ेदान बन रहे हैं आज। पूतना के पूत (पुत्र) क्या जाने गोपाल को। हर ओर पूतना का बोलबाला है। जन्म से मृत्युपर्यन्त पूतना भक्ति में संसार खोया हुआ है। पूतना ही हमारे जीवन का मंत्र बन बैठी है। कैसा घोर कलयुग आया है।

एक समय जब शिक्षा, समाज, राजनीति पर धर्म का अधिकार था तब कृष्ण की भक्ति थी। आजादी के साथ ही तुमने नारा लगाया कि धर्म को राजनीति से हट जाना चाहिए। हम हट गये। तुमने हमें शिक्षा से भी अलग किया और समाज को भी हमसे अलग कर लिया तभी तो हर ओर पूतना का साम्राज्य है। धर्म हटा पूतना आयी। सूर्य हटा अँधेरे ने अपनी चादर फैलायी। राजनीति के नाम पर नैतिक पतन, समाजवाद के नाम पर समाज-शोषण और चरित्र हनन, शिक्षा के नाम पर पूतना-वाद का भटकाव। अब तुम अँधेरे को ही तो रोशनी कहोगे और जुगनू को सूर्य। रात में जागोगे। दिन की चकाचौंध असह्य है इसलिए सो जाओगे। मैया पूतना की जय।

कल और आज की शिक्षा का भेद ही समझ में आ जावे तो आपको पूतना स्पष्ट हो जावेगी। अतीत युग में बालक ग्यारहवें वर्ष की आयु में गुरुकुल में प्रवेश पाता था। इसके पूर्व उसकी शिक्षा उसके माता-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पिता तथा समाज में ही प्रतिष्ठित धर्माचार्यों द्वारा होती थी। रहस्य, लीलाओं द्वारा माता-पिता तथा पुत्र अपने जीवन के मूल उद्देश्यों और कर्त्तव्यों का सुगम सरल वोध करते थे। स्वयं को पहचानते थे। विष और अमृत के भेद को पहचानते थे।

लीलाओं में प्रथम लीला थी मन्दिर की। मन्दिर की रहस्य लीला आज आप नहीं जानते हैं। समाज भूल गया है। मन्दिर में वालकों को उनका निज स्वरूप तथा निज धर्म पढ़ाने हेतु ही वालक को लेकर माता-पिता अपने कुल के आचार्य के साथ जाते थे। उस मन्दिर के दर्पण में उसका रूप दिखाते थे। वालक से कहते थे कि मन्दिर तुम्हारी तस्वीर है। जैसे तुम ध्यान में पल्थी लगाकर बैठते हो वैसे ही तो प्रभु का मन्दिर वनाया है। यथा :-

पल्थी के जैसा चबूतरा; धड़ (शरीर) के जैसा गोल कमरा; सिर के जैसा मन्दिर का गुम्बद; ब्रह्मचारी वालक की जटाओं के जूड़े जैसा ही गुम्वद के ऊपर कलश, आत्मा जैसी प्रभु की मूरत और जीव रूप इस शरीर का पुजारी, तू ही तो है। जो धर्म पुजारी का मन्दिर तथा मूर्ति के प्रति है। वही धर्म तुम्हारा आत्मा रूपी कृष्ण के प्रति है तथा देह रूपी देवालय के प्रति है। जैसे पुजारी मन्दिर को गन्दे आचरण और दुराचरण में अपवित्र नहीं कर सकता उसी प्रकार तू शरीर रूपी पवित्र देवालय को गन्दे विचारों तथा गन्दे आचरण द्वारा कैसे अपवित्र कर सकता है ?

जिस प्रकार पुजारी मन्दिर का मालिक नहीं है। मालिक तो प्राण प्रतिष्ठित मूर्ति है। पुजारी एक निमित्त (ट्रस्टी) ही होता है। उसी प्रकार आत्मा होकर प्रभु ही तो इस शरीर देवालय के मालिक हैं। जीव इस शरीर का इस्तेमाल तो कर सकता है परन्तु एक अंगुली अपने मन से वना तो नहीं सकता। इस शरीर में जीव होकर तुम मात्र पुजारी (निमित्त, ट्रस्टी) ही तो हो। एक निमित्त (ट्रस्टी) की भावना से शरीर का उपयोग ईमानदारी से करो इस देवालय को विषयों में नष्ट मत करो। अपनी पूतना स्वयं वनना तो निकृष्टतम् पाप है।

जब शरीर में तुम मात्र निमित्त हो तो मकान मालिक, दुकान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मालिक कहाँ से हो जाओगे ? स्वयं को अन्धा मत करो। सचराचर में समाज के प्रति, प्राणी मात्र के प्रति निमित्त बनकर जीना सीखो। स्वामित्व की संकीर्णताओं को त्यागो। हर ओर वासुदेव हैं। सचराचर को समर्पित होकर निमित्त भाव से जीना सीखो! स्वामित्व की संकीर्णता में जो फँस गया। उसे कंस ने पकड़ा, 'अस्ति' और 'प्राप्ति' ने नोचा; जरासन्ध ने उनकी सन्धियां तोड़ी और काल यवन निगल गया उसको। सावधान होकर मन्दिर में स्वयं का तथा अपने धर्म और कर्त्तव्य को पहचानो।

जिस प्रकार पुजारी भगवान की मूर्ति को भोग लगाता है उसी प्रकार तुमने भी खाया कहाँ ? आत्मा गोपाल को ही तो भोग लगाया। उन्होंने ही भोजन को यज्ञ के द्वारा शक्ति में, रक्त-माँसादिक में, लौटाया। जो वस्तु प्रभु की मूरत पर न चढ़ाई जा सकी उसे साक्षात आत्मा वसुदेव पर कैसे चढ़ा रहे हो ? शराव, गाँजा. भाँग, तम्बाकू, अण्डा, माँस का सेवन करने वाला अभिशप्त है।

बढ़िया बर्फी खाने के पश्चात् क्या तुम सड़ा हुआ गुड़ खाओगे ? जिसने गोपाल के स्वरूप का नशा किया है वह सांसारिक नशों में कदापि नहीं जावेगा। भाँग को पीने वाले गोपाल रस को नहीं जानते हैं। जो मेरे प्रभु को जानता है वह उन्हीं में खो जाता है। एक ही नशा करता है। उनकी मनोहारी छवि का !

क्या पुजारी मूर्ति के गहने चुराकर बेच सकता है ? मान लो पुंजारी ने मूर्ति का मुकुट चुराकर बेच दिया, विषय भोग के लिये। क्या तुम इसे अच्छा कहोगे क्या यह पाप न होगा ? उसी प्रकार तुम्हारी इन्द्रियाँ आत्मा गोविन्द का आभूषण ही तो है। क्या प्यारे कन्हैया के गहने बेच दोगे ? इन्द्रियों का आत्म-यज्ञार्थ प्रयोग करो।

भगवान श्री राम ने शवरी के जूठे बेर खाये थे। घट-घट वासी आत्मा होकर आज भी प्रत्येक जीव की जूठन को शक्ति; रक्त, माँसादिक में बदल रहे हैं। क्या उन्होने प्राणी मात्र से भेद किया ? सभी को समान भाव से प्यार करने वाले आत्मा के धर्म को जो माने वही तो धर्मात्मा (धर्म+आत्मा) होगा। प्राणी मात्र से अभेद प्यार करो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भेदभाव करने वाले प्रभु द्रोही हैं।

जिसने आत्मा होकर राख और मिट्टी को सुन्दर पवित्र फलों का स्वरूप प्रदान किया; जो घट-घट वासी होकर सम्पूर्ण सचराचर को प्रकट करते हैं। जो आत्मा होकर आज भी निष्काम नौकर बने हर एक जीव को साँस, धड़कन, शक्ति, भोजन और सामर्थ्य प्रदान कर रहे हैं। ऐसे घट-घट वासी गोपाल का ध्यान करो। फिर स्वयं से पूछो कि जब परमेश्वर स्वयं सचराचर के निष्काम सेवक बने हैं। निष्काम सेवाओं द्वारा तुम्हें यह शरीर दिया तथा आत्मा होकर निरन्तर सेवा-रत है। क्या उन्होंने कोई फीस ली ? निष्काम सेवाओं द्वारा प्रकृति और पुरुष बना रहे तुमको ! सजा संवार रहे तुमको ! खिला पिला रहे तुमको ! तो बताओ यह शरीर किस लिये दिया तुमको ? प्राणी मात्र की सेवा के लिए अथवा एक परिवार के संकीर्ण हितों के लिये समाज को नोचने के लिये ! सताने के लिए। विचार करो !

प्रवचन की यमुना प्रवाहित हो रही थी। श्रोतागण ध्यान से सुन रहे थे। तभी एक सेठ जी उठ खड़े हुये। प्रवचन रुक गया। सेठ ने कहा "स्वामी जी, जो कुछ आप कहते हैं सो सम्भव नहीं है। आज के युग में यह सब जमता नहीं है। मैं रोज दस माला प्रभु की फेरता हूँ। उसकी पूजा और ध्यान करता हूँ। क्या इतना उपयुक्त नहीं है ?'

इस सन्यासी ने उत्तर दिया, "सेठ जी कोई 'तुम्हारे नाम की सौ' माला फेरे तुम्हारी स्तुति गावे। तुम्हारे पौत्र को अनाधिकार मारे लूटे ! तुम्हारी बहू के कपड़े नोचे। उसके साथ मुँह काला करना चाहे ! तो क्या तुम उसे वरदान दोगे वह तुम्हारे नाम की माला जो फेर रहा है।"

सेठ :—"महाराज ! मैं उसे जेल भिजवा दूंगा। कोई मेरी बहू की तरफ आँख उठाकर देखे तो" सन्यासी ने उत्तर दिया, "फिर तुम्हीं बताओ ! जो सचराचर को आंखें दे रहा है उसे तुम माला से अन्धा कैसे करोगे ? जिसके कर्म में माला नहीं; विचार, आचरण में माला नहीं ! उसके हाथ की माला को प्रभु नहीं स्वीकारते हैं।"

छोटे बालकों से आचार्य पूछते थे, "ये हाथ किसके ?" बालक उत्तर देते थे, "जिसने बनाए उसके।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आचार्य--प्रभु ने बनाये हैं हाथ तुम्हारे ! सावधान ! प्रभु के हाथ प्रभु की ही भाँति प्राणी मात्र की सेवा में लगें। गोविन्द हरि !

मन्दिर का स्वरूप अति सक्षेप में आपको बताया है। समय का भान है। उस युग की कथा सुना रहा हूं। जब माता-पिता चाहते थे कि उनका बेटा धर्मात्मा हो। ईश्वर का भक्त हो। धरती का भगवान बने। प्राणी मात्र का रक्षक, सेवक और सुखकर हो।

आज आपसे एक प्रश्न पूछना चाहूंगा। आप आश्रम में बैठ हैं। जन्माष्टमी का पावन पर्व है। स्वयं को धोखा न दीजियेगा। क्या आप अपने पुत्र को इसी धर्म के लिये पढ़ने भेजते हैं ? आज की शिक्षा का उद्देश्य क्या है ? यही न ! मेरा बेटा पढ़ लिख कर अच्छी नौकरी पावे। मोटो तनखा मिले और खूब मोटो घूस ! बोलो ? स्वयं को उत्तर दे डालो ! तुम अपने बालक में कृष्ण देखना चाहते हो या कंस ? आज अष्टमी के दिन तुम्हारा पुत्र मौन अन्तर में पूछ रहा है--

'मां तू मुझे क्या बनाना चाहती है उत्तर दो ! स्वयं को मौन होकर उत्तर दो। आज तू पूतना बनेगी या यशोदा ? भोले, अबोध शिशु के रूप को निहार ! वही तो आज जीवन के चौराह पर तेरी उंगली पकड़े खड़ा है। "माँ ! बता मुझे कृष्ण बनायेगी या कंस ! मैं यशोदा को माँ कहूं कि पूतना को ! माँ तू क्या है ? पूछ रहे हैं वासुदेव ! आज मूंद के आँख स्वयं को उत्तर दे डालो ! आज तो अपने को धोखा न दो ! तुम्हें बाल कन्हैया की सौगन्ध। आह ! आज की शिक्षा ही जब पूतना हो गयो ! गोपाल यह क्या हो गया ! धर्म ! सन्त अछूत अग्राह्य हो गये। शिक्षा को पूतना खा गई। माँ अब अपने लाल को समाजद्राही ! सन्ततिद्रोही ! घूसखोर (करप्ट) कंस बनाना चाहती है। आँखें तरस रही हैं मैया यशोदा के दरस को ! आँखें बरस रही हैं बरबाद नष्ट होती इस महान संस्कृति के ढहते महलों को निरख के। वासुदेव ! विश्व की महानतम संस्कृति जो प्राणी मात्र में ईश्वर देखती थी ! सेवा को ही जिसने प्रभु का गीत बनाया, जो सबके लिए ही जीता है, ऐसा मानकर जिये। क्या पूतना नष्ट कर देगी उनको ! हा देव ! हम कहाँ से कहाँ पहुंच गये। हर ओर पूतनायें हैं। अबोध शिशु दहलाये हुए हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran
वासुदेव आज अष्टमी है। प्रगट हो जाओ नाथ ! त्राहिमाम् ! त्राहिमाम्।

प्यारे भक्त समूह ! लीला दर्पण में स्वयं को निहारो ! आत्म दर्शन करो। दो हजार साल की लम्बी गुलामी ! लम्बी अन्धेरी रात ! सन् १९४७ में समाप्त हुई। आजादी आई। दो हजार वर्ष की गुलामी सह भी यह संस्कृति नष्ट नहीं हुई ! क्यों ? क्योंकि शिक्षा और समाज पर धर्म का अधिकार था। इसलिए आप नष्ट नहीं हुए। परन्तु आजाद होकर आज सब कुछ नष्ट हो रहा ! धर्म को अछूत बनाकर बोलो तुमने क्या खोया; क्या पाया ? आजादी से पूर्व भी हम गुलाम थे। आजादी के बाद भी हम गुलाम ही हैं। अल्प संख्यक होने के नाते दूसरे सम्प्रदायों को अपने धर्म ग्रन्थ पढ़ाने का अधिकार है परन्तु बहुसंख्यक होने के नाते आपको नहीं है। कोमल बाल्यावस्था में जो संस्कार न दे पाये। वह जाति, वह संस्कृति क्या जीवित है ? जिन्हें हम अल्पसंख्यक कहते हैं वे विश्व के बहुसंख्यक सम्प्रदाय हैं। उनके पास सत्ता है। शिक्षा है। जो सारे विश्व में बच्चों को संस्कार दे रहे हैं उन्हें यहाँ भी अधिकार है। हम न यहाँ संस्कार दे पा रहे हैं और विश्व में भी हम कहीं भी सत्ता में नहीं हैं। तुम्हीं बताओ ! क्या हम विनाश की ओर जा रही विश्व की इकलौती संस्कृति नहीं हैं ?

जिन्हें हजारों वर्ष की लम्बी गुलामी न मार सकी क्या वे आजाद होकर महाविनाश की गोद में सो जावेंगे ? कंस जीत रहा है। हर ओर पूतना की जय जयकार है। काश—शिक्षा से धर्म को अलग न किया गया होता। सभी को पढ़ाने का न्याय सम्मत अधिकार दिया गया होता।

कुछ वर्ष पूर्व की घटना उभर आई है। यह सन्यासी बदरीनाथ धाम की यात्रा पर था। ऋषिकेश में एक आयरिश डाक्टर से मुलाकात हुई। लगभग ६४ वर्ष की आयु ! अपने देश से भगवान बदरीश से मिलने का सुन्दर संकल्प सजाकर चला था। चेहरे पर प्रसन्नता की चमक देखते ही बनती थी। उसने इस सन्यासी को बताया कि उसकी बरसों पुरानी इच्छा अब पूरी होगी। वह पैदल ही बदरीनाथ धाम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

जायेगा। प्रौढ़ चेहरे पर वालकों जैसी उत्कण्ठा और भोली चाहत देखते ही वनती थी। कितना खुश था वह! राह में उसके जूते फट गये। वह नंगे पांव चला। छाले पड़े और फूट गये! घाव वने। पर आनन्द मग्न वह चलता रहा। भगवान वदरीश से मिलने जो जा रहा था। कितनी वार इस सन्यासी ने कहा कि गाड़ी में बैठ जाओ। वह न माना। उसने श्रीमदभगवद्गीता का आयरिश भाषा में भाष्य किया था और निरन्तर मुफ्त बंटवाता रहा था। कृष्ण के आयरिश गीत उसके होठों पर थे। उन्मुक्त हंसी! गौर रक्ताभ वर्ण। निश्छल नेत्र और सरल मोहक हंसी बिखेरता वह नंगे पाव वढ़ता ही रहा।

जब वदरीनाथ धाम पर पहुंचा तो उसके चेहरे की आनन्दातिरेक उत्तेजना देखते ही वनती थी। मेरे जीवन की सवसे वड़ी अभिलाषा आज वरसों वाद पूरी हुई। उसने स्वयं से ही फुसफुसाकर कहा उसके नेत्र छलक उठे। अलकनन्दा के ठण्डे पानी में नहाया था वह!

उसी शाम इस सन्यासी ने उसे ब्रह्म-कपाल से ऊपर अलकनन्दा के किनारे शून्य को घूरते बैठे देखा। उदास, टूटा हुआ, निर्जीव सा चेहरा उसका। प्रस्तर प्रतिमा का भ्रम सा उत्पन्न करता। कलेजा मुंह में आ गया। सन्यासी ने पूछा, "दर्शन हुये?"

उसने नकारात्मक सिर हिलाया। बोला कुछ भी नहीं। मौन शून्य को व्यर्थ सा घूरता रहा। कुछ देर वाद उसने सिर घुमाया। आँखों से आंखें चार हुईं! कितनी वेदना! असह पीड़ा! हे भगवान! ऐसा क्या हो गया? यह इतना दुखी क्यों है? मुझमें पूछने की हिम्मत भी तो नहीं वन पा रही है। वह स्वयं ही बोला—"यह मन्दिर तो कृष्ण का है न?"

"हाँ।"

"उसी का न! जिसने गीता में कहा कि हे अर्जुन! जो मुझे श्रद्धा से पुष्प और पत्र अर्पित करता है मैं उसे उसी श्रद्धा से ग्रहण करता हूं। पुजारी मुझसे पूछ रहे थे कि एक सौ एक रुपये की पूजा कराेगे कि पाँच सौ एक रुपये की? भगवान! क्या मैं जिन्दा हूं....'

उसका कण्ठ अवरुद्ध हो गया था। उसने चेहरे को नदी की ओर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

घुमा दिया था। लग रहा था, बरस रहा है। उसकी वर्षों की साधना तपस्या आस्था बरस रही थी।

काश ! यह सन्यासी उसे बता पाता कि मित्र यह मन्दिर और ऐसे ही बहुत से प्राचीन सनातन मन्दिरों का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से राष्ट्रीयकरण हो चुका है।

हम धर्म निरपेक्षता की बात तो करते हैं परन्तु बलिदान सिर्फ हमारा ही होता है। बलि का बकरा मात्र यही संस्कृति है।

सनातन धर्म के बड़े एवं प्राचीन धार्मिक मन्दिरों का भी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से राष्ट्रीयकरण हो चुका है। एम० एल० ए०, एम० पी० और मन्त्री उनकी कमेटियों के सदस्य होते हैं। तिरुपति बाला जी बदरी नाथ, केदारनाथ आदि जितने भी बड़े मन्दिर हैं उनका चढ़ावा राजनैतिक और शाही कमेटियों में चला जाता है। लगभग अस्सी करोड़ या इससे अधिक का चढ़ावा। बलि का बकरा सनातन मन्दिर ही हैं। अन्य किसी सम्प्रदाय के धर्म स्थान में घुसने की हिम्मत इनमें नहीं है। मुर्दे का कफन हर कोई नोंचता है। न मुर्दे बोलते हैं न ही इस संस्कृति के महान लोग !

हमने पूछा उनसे कि आपने मन्दिर के धन का क्या उपयोग किया ? कहने लगे उससे सड़कें बनवा दीं। कालेज खोल रहे हैं। हमने कहा टैक्स के रूप में आप जो हमसे ले रहे थे क्या वह कम था ? इस देश में सबसे अधिक टैक्स देने वाले इसी संस्कृति के लोग हैं उतने धन से क्या आपकी प्यास बुझी नहीं थी। मन्दिर तो धार्मिक ट्रस्ट है उसका धन तो उस धर्म और संस्कृति के प्रसार में लगना था। आप ही सोंचे कि अस्सी करोड़ रुपये की पुस्तकें यदि हम छपवा रहे होते तो प्रत्येक घर में दस पुस्तकें प्रति वर्ष जाती तो क्या आज आप अपनी संस्कृति से इतने अनभिज्ञ होते ?

हम यह भी नहीं कहते कि आप हमारे मन्दिरों का अधिग्रहण न करें। आप सारे मन्दिर ले लें। परन्तु धन का प्रयोग सही उद्देश्यों में करें। अन्यथा नहीं। क्या इतनी सी बात भी उनको समझ में नहीं आती? जिनके जीवन में ट्रस्टी की भावना ही नहीं, वे ट्रस्टी हैं। आपके मन में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रश्न उठता होगा कि इस प्रश्न को अन्य राजनीतिक अथवा सामाजिक (हिन्दुत्व ? के नाम पर बने) दलों ने क्यों नहीं उठाया। उसका कारण है कि यह सब मिलकर चल रहा है। मन्दिरों में यदि चार सदस्य सत्तारूढ़ दल के लेते हैं तो दो सदस्य इन दलों के भी ले लिये जाते हैं। सैकड़ों वर्षों की दान की सम्पत्ति लखनऊ में नीलाम हुई। मन्दिरों का प्रसाद चढ़ावा नित्य प्रति बिकता रहा। फिर भी कंगाल भगवान बदरीश के मन्दिर को बिड़ला बन्धु बनवा रहे थे। कमेटी के पास धन नहीं था। राजनीति से धर्म अलग रहना चाहिये। यह नारा नेताओं का था और राजनीतिज्ञ नेता मन्दिरों का अधिग्रहण कर रहे थे ?

हिन्दुत्व ? का नारा देने वाले इस सन्यासी से कह रहे थे कि स्वामी जी हिन्दू ? अपने को हिन्दू ? कहने में सकुचाते क्यों हैं ? क्या उत्तर देता यह सन्यासी ? हिन्दुत्व ? की बात करने वालों ने मन्दिरों का प्रत्यक्ष परोक्ष राष्ट्रीयकरण करवाया है। अकालियों ने पुलिस भी गुरुद्वारों में घुसने नहीं दी। जाने हिन्दू ? अपने को हिन्दू ? कहने में सकुचाते क्यों हैं ? भोले नेता जी को कौन समझाये।

बदरीनाथ धाम प्रवास के समय इस सन्यासी ने बहुत सी विलक्षण लीलायें देखीं। एक गाय सीढ़ियाँ चढ़ती भगवान बदरीश के सामने जा पहुंची। थोड़ी देर अपलक निहारती रही। फिर लौट पड़ी। ब्रह्मकपाल पर आकर अलकनन्दा की ओर मुँह करके खड़ी हो गयी। फिर अचानक उछली और अलकनन्दा के बर्फीले पानी में कूदकर बहने लगी। प्राण त्याग दिये। ठीक उसी स्थान पर जहाँ आयरिश डाक्टर बैठा है। लुटा हुआ, टूटा हुआ, नष्ट प्राय ! वासुदेव ! क्या हम जीवित हैं ? उसको पीड़ा सहन नहीं होती गोपाल ! तन जल रहा है। मन आज गाय की भाँति माँ अलकनन्दा की लहरों में खो जाने का होता है। गोपाल ! एक अनन्य भक्त की लुटती आस्था की रक्षा भी तो नहीं कर सकता ! सरकारी तन्त्र के सामने यह सन्यासी मन्दिर में घुस भी तो नहीं सकता !

धर्मप्राण जनता का साठ से अस्सी प्रतिशत धन, चन्दे के रूप में, हिन्दुत्व ? के नाम पर बने राजनैतिक, सामाजिक और तथाकथित धार्मिक दल, सम्प्रदाय परिषद और समाज एकत्र कर ले जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

लगभग १८% (प्रतिशत) बड़े मन्दिरों के माध्यम से सरकार और सदस्य ग्रहण करते हैं। आठ से दस प्रतिशत धन छोटे मन्दिरों, आश्रमों, सेवा संस्थाओं को मिलता है जिनको 'बड़े लोग' भ्रष्ट कहते हैं। हम सन्यासी निरन्तर प्रभु नाम की सेवाओं को सारे भारत में करते हैं। निरन्तर धर्म ग्रंथ छापते और मुफ्त बांटते हैं। स्कूल, मन्दिर, धर्मशाला बनवाते एवं योग–ध्यान साधना शिविर लगाते हैं। जन-जन को जगाते हैं जो आप अपने चारों ओर अहर्निश देख रहे हैं। जो ९० से ९२ प्रतिशत आपकी आस्था खा गये उन्होंने लौटाकर एक मानस भी छपवाई हो तो बतावें ? जो धर्मप्राण जनता का ९२ प्रतिशत धन खा गये उन्हें शिकायत है कि हम भ्रष्ट हैं ! समाज, शिक्षा, सत्ता, राजनीति सब कुछ छीनने के उपरान्त धार्मिक आस्थाओं का भी ठेका करने वाले पुनः आप लोगों को भटका रहे हैं। धर्म धर्माचार्यों और संस्कृति के विरुद्ध आपके मन में तिरस्कार और घृणा के भाव भरते जा रहे हैं। आप उनकी भावनाओं को तौलें ! उन्हें पहचाने ! देखें वे आपको कहाँ लिए जा रहे हैं। हम तो पापी हैं। भ्रष्ट हैं। फिर भी सेवा कर रहे हैं। वे पवित्र और महान सिर्फ बटोर कर सो क्यों जाते हैं ? हिन्दुत्व ? को जगाने के लिये ऐसे लोगों ने एक संस्था बनाई है। जिसका अध्यक्ष अथवा सदस्य कोई सन्यासी नहीं हो सकता है। सन्यासी लोकसभा व विधान सभा का सदस्य तो हो सकता है। परन्तु इस महान संस्था का घटिया सदस्य भी नहीं हो सकता है। इस संस्था का उद्देश्य क्या है ? इस संस्था का जन समुदाय को फुसलाने का एक हथकंडा यह भी है कि इस देश के सन्यासी इकट्ठा नहीं होते। हम उन सबको एक मंच पर एकत्र करना चाहते हैं। साथ ही सन्यासी जो भ्रष्ट और अछूत हैं उस संस्था के सदस्य भी नहीं हो सकते।

आप कभी अपने बच्चों के स्कूल गये होंगे। वहाँ जब स्कूल चल रहा होता है तो अध्यापक इकट्ठा नहीं बैठते वरन् अपनी-अपनी कक्षाओं को पढ़ाते हैं। उसी प्रकार सन्यासी धर्म की कक्षा को पढ़ाने में व्यस्त हैं। इकट्ठा बैठकर क्या करें ? सन्त-सन्त सब एक हैं। हम में दो हैं ही कहाँ ? शायद सन्यासियों के प्रति ध्यान भटकाकर वे अपनी किसी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सर्वथा गुप्त उद्देश्य को सिद्ध करना चाहते हैं। प्रभु ही जाने। आजादी के ३६ वर्ष बाद, सत्ता में हारने पर अब उन्हें हमारी याद आयी है। क्यों ?

कल जब शिक्षा हमारे पास थी तो समाज स्वतः जुड़ रहा था। दो सौ व्यक्तियों का परिवार था तो चूल्हा एक ही था। आज शिक्षा इनके हाथों में है तो प्रत्येक परिवार खण्ड-खण्ड हो रहा है। पिता पुत्र में दीवारें खिंच रही हैं। परिवार समाज का सबसे छोटा समूह है। जब छोटी इकाई ही टूट रही है तो सबको संगठित करने का नारा तो लगा रहे हैं। परन्तु अलगाव की अभिशप्त शिक्षा प्रणाली पर कुछ कहना नहीं चाहते हैं। जब परिवार ही टूट रहे हैं तो धर्म संस्कृति और राष्ट्र को बाँधना एक दिवास्वप्न नहीं तो क्या है ? अपने पापों और अपराधों से जनता को भटकाने के लिये धर्म सन्यासियों और धर्माचार्यों को गालियाँ दे रहे हैं। विघटन की प्रक्रिया को रोकने के लिए वे मूल समस्या (शिक्षा प्रणाली) से जनता को बहला देना चाहते हैं। छत्तीस वर्षों में धर्म और संस्कृति का विघटन जो उनकी ठेकेदारी में हुआ, उसका दोष, भी हम पर मढ़ना चाहते हैं जो नितांत उनका ही रहा।

आप ही बतायें ! जब दीवार की प्रत्येक ईंट मसाला लेकर अलग भागना चाहेगी तो छत का क्या होगा ? भ्रान्तियों और धोखाधड़ी की वल्लियों पर छत कब तक टिकाई जा सकेगी। परिवार दीवार की ईंट के समान हैं। आज ईंटें छिटककर भाग ही नहीं वरन चिटक कर टुकड़े हो रही हैं। छितरा जायेंगी ईंटें जब, धर्म और संस्कृति की छत भर-भराकर गिरेगी। उसके नीचे मानवता अकाल मृत्यु को ही तो प्राप्त होगी। फिर उन खण्डहरों में उल्लू और चमगादड़ ही रहेंगे।

मन्दिरों का चढ़ावा धर्म और संस्कृति के प्रचार और प्रसार के लिये, निरीह पशु पक्षियों की सेवा रक्षा के लिए तथा ग़रीब और अपाहिज लोगों की सेवा के लिए है। मन्दिर धार्मिक ट्रस्ट हैं। इनके धन का अन्यथा प्रयोग दण्डनीय अपराध है जैसा कि किसी भी ट्रस्ट में होता है। परन्तु सत्ताधीश और नेता कभी अपराधी नहीं होते।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

आप इस सन्यासी की भावनाओं का अन्यथा अर्थ भी न लगावें। यह सन्यासी किसी भी नेता, संस्था अथवा धर्म के विपरीत नहीं है। बात सिर्फ न्याय और नैतिकता की है। यह सन्यासी आप सबसे अनुरोध करता है कि सम्प्रदायों और संस्थाओं एवं दलगत संकीर्णताओं से ऊपर उठकर आप स्वयं निर्णय करें। कंस की भाँति सत्य रूपी वसुदेव एवं न्याय रूपा देवकी को अपने तथा दलहित के विपरीत जानकर सत्य निर्णय रूपी कृष्ण की हत्या तो कदापि न करें। यह महापाप होगा। समाज में, लोकसभा और विधान सभाओं में, सुप्रीम कोर्ट तथा न्याय से सम्बद्ध संस्थाओं में इसकी खुली चर्चा करें और महाविनाश के कगार पर खड़ी इस संस्कृति को न्याय की नई सांसें प्रदान करें। आप महापुण्य के अधिकारी होंगे।

उस आयरिश डाक्टर तथा ऐसे ही न जाने कितने आस्थावानों को नित्य हत्याओं को रुकवाना हमारा सबका धर्म है। कभी वनस्पतियां तथा भोजन मन्दिर द्वारा गायों को मिलता था। अब भूखी गाय अपनी मौन पीड़ाओं को लेकर माँ अलकनन्दा की गोद में जल समाधि ले रही है। मन्दिर का वह चढ़ावा जो एक दिन से अधिक नहीं रुक सकता। सड़ जाता है। वह भी अब गायों के लिए नहीं है। उसे कमेटी रोजाना नीलाम करती है। भूखी गौएं मौत ढूंढती हैं। भगवान भी मन्दिर में कैद हैं। काश ! हम न्याय दिला पाये होते।

यदि इस समाज, संस्कृति और धर्म रूपी छत की रक्षा करनी है तो इन ईंटों को छिटकने से रोकना होगा। टूटने से बचाना होगा। यह सब अच्छी धार्मिक शिक्षा द्वारा तथा मन्दिरों को न्याय दिलवा कर ही सम्भव है। शिक्षा को पूतना के पंजे से छुड़ाकर यशोदा की गोद में डालना होगा। उद्देश्यपूर्ण संस्कारवान शिक्षा प्रणाली द्वारा ही राष्ट्र को भी संगठित किया जा सकेगा। इसी उद्देश्य से हम सन्यासी जुड़कर राजनीति नहीं करते, वरन् घूम-घूम कर धर्म रूपी गोंद का ज्ञान देकर ईंटों को पुनः जोड़ने का मार्गदर्शन करते हैं। हम अलग नहीं हैं। हम सब एक हैं। प्राणी मात्र की सेवा ही हमारा धर्म है। अधिकार आपके पास है। हम तो चौराहे के पत्थर हैं। ठोकर खाकर भी सेवा करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
यही हमारी नियति है।

पूतना जीयेगी अथवा बाल कन्हैया ! कंस की इच्छा है पूतना जिये ! भक्त मात्र की इच्छा है बाल कृष्ण ! कंस हारता है। भक्त की जीत होती है। कन्हैया पूतना का उद्धार करते हैं।

पूतना का भाई शकटासुर जब सुनता है कि नन्हें बालक ने मेरी बहन की हत्या कर दी तो वह बदला लेने गोकुल पहुंच जाता है। नन्द बाबा और यशोदा व्यस्त हैं। नन्हें कन्हैया को शकट (गाड़ी जिसे बैल खींचते हैं) के नीचे लिटाकर वे दूसरे कार्यों में व्यस्त हैं। तभी शकटासुर, शकट (गाड़ी) पर प्रगट हो जाता है। बाल कन्हैया उसकी भावनाओं को जानकर कसके लात मारते हैं गाड़ी उलट जाती है और शकटासुर उसके नीचे दबकर मर जाता है।

प्रभु को नीचे डालकर इस जीवन रूपी शकट को भरने की वृत्ति ही तो शकटासुर है। हमारा सारा जीवन शकटासुर की सेवा में ही बीत जाता है। सारे समाज और संसार को नोचकर शकट भरने की शकटासुर वृत्ति से ही तो आज इस महान संस्कृति का बिखराव, विघटन और सर्वनाश प्रारम्भ हो गया है। संकीर्ण होकर जो जीवन रूपी शकट को भरेगा प्रभु उसकी शकट को उलट देंगे।

भगवान शकट को भरने को मना नहीं करते हैं। प्रभु को शकट के ऊपर बिठाकर भरो। अर्थात शकट नारायण आपका है। हम निमित्त हैं आपके ! संसार आपका है ! शकट संसार सेवा के लिये है। हम शकटासुर नहीं बनेंगे। प्राणी मात्र के होकर, सब में आप हैं ऐसा मान कर इस भरे हुए शकट को सेवार्थ में प्रयोग करेंगे।

कंस तृणावर्त को बुलाता है। उसे नन्हें शिशु की हत्या का आदेश करता है। तृणावर्त गोकुल आता है, वायु में मायावी रूप बनाकर उड़ता रहता है। उसकी निगाहें नन्हें गोपाल पर पड़ती हैं। वासुदेव आँख मूंद कर सो रहे हैं। माँ यशोदा अन्य कार्यों में व्यस्त हैं। बाल कन्हैया नितान्त अकेले एवं असावधान हैं। तृणावर्त उनको उठाकर, वायु का बवण्डर बनके ऊपर उठता है। उसकी इच्छा है कि तेज वायु का बवण्डर बनकर बाल कन्हैया को ऊँचा उठाकर चट्टानों पर पटक कर समाप्त

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

आप इस सन्यासी की भावनाओं का अन्यथा अर्थ भी न लगावें। यह सन्यासी किसी भी नेता, संस्था अथवा धर्म के विपरीत नहीं है। बात सिर्फ न्याय और नैतिकता की है। यह सन्यासी आप सबसे अनुरोध करता है कि सम्प्रदायों और संस्थाओं एवं दलगत संकीर्णताओं से ऊपर उठकर आप स्वयं निर्णय करें। कंस की भाँति सत्य रूपी वसुदेव एवं न्याय रूपा देवकी को अपने तथा दलहित के विपरीत जानकर सत्य निर्णय रूपी कृष्ण की हत्या तो कदापि न करें। यह महापाप होगा। समाज में, लोकसभा और विधान सभाओं में, सुप्रीम कोर्ट तथा न्याय से सम्बद्ध संस्थाओं में इसकी खुली चर्चा करें और महाविनाश के कगार पर खड़ी इस संस्कृति को न्याय की नई सांसें प्रदान करें। आप महापुण्य के अधिकारी होंगे।

उस आयरिश डाक्टर तथा ऐसे ही न जाने कितने आस्थावानों को नित्य हत्याओं को रुकवाना हमारा सबका धर्म है। कभी वनस्पतियां तथा भोजन मन्दिर द्वारा गायों को मिलता था। अब भूखी गाय अपनी मौन पीड़ाओं को लेकर माँ अलकनन्दा की गोद में जल समाधि ले रही है। मन्दिर का वह चढ़ावा जो एक दिन से अधिक नहीं रुक सकता। सड़ जाता है। वह भी अब गायों के लिए नहीं है। उसे कमेटी रोजाना नीलाम करती है। भूखी गौएं मौत ढूंढती हैं। भगवान भी मन्दिर में कैद हैं। काश ! हम न्याय दिला पाये होते।

यदि इस समाज, संस्कृति और धर्म रूपी छत की रक्षा करनी है तो इन ईंटों को छिटकने से रोकना होगा। टूटने से बचाना होगा। यह सब अच्छी धार्मिक शिक्षा द्वारा तथा मन्दिरों को न्याय दिलवा कर ही सम्भव है। शिक्षा को पूतना के पंजे से छुड़ाकर यशोदा की गोद में डालना होगा। उद्देश्यपूर्ण संस्कारवान शिक्षा प्रणाली द्वारा ही राष्ट्र को भी संगठित किया जा सकेगा। इसी उद्देश्य से हम सन्यासी जुड़कर राजनीति नहीं करते, वरन् घूम-घूम कर धर्म रूपी गोंद का ज्ञान देकर ईंटों को पुनः जोड़ने का मार्गदर्शन करते हैं। हम अलग नहीं हैं। हम सब एक हैं। प्राणी मात्र की सेवा ही हमारा धर्म है। अधिकार आपके पास है। हम तो चौराहे के पत्थर हैं। ठोकर खाकर भी सेवा करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
यही हमारी नियति है।

पूतना जीयेगी अथवा बाल कन्हैया ! कंस की इच्छा है पूतना जिये ! भक्त मात्र की इच्छा है बाल कृष्ण ! कंस हारता है। भक्त की जीत होती है। कन्हैया पूतना का उद्धार करते हैं।

पूतना का भाई शकटासुर जब सुनता है कि नन्हें बालक ने मेरी बहन की हत्या कर दी तो वह बदला लेने गोकुल पहुंच जाता है। नन्द बाबा और यशोदा व्यस्त हैं। नन्हें कन्हैया को शकट (गाड़ी जिसे बैल खींचते हैं) के नीचे लिटाकर वे दूसरे कार्यों में व्यस्त हैं। तभी शकटासुर, शकट (गाड़ी) पर प्रगट हो जाता है। बाल कन्हैया उसकी भावनाओं को जानकर कसके लात मारते हैं गाड़ी उलट जाती है और शकटासुर उसके नीचे दबकर मर जाता है।

प्रभु को नीचे डालकर इस जीवन रूपी शकट को भरने की वृत्ति ही तो शकटासुर है। हमारा सारा जीवन शकटासुर की सेवा में ही बीत जाता है। सारे समाज और संसार को नोचकर शकट भरने की शकटासुर वृत्ति से ही तो आज इस महान संस्कृति का बिखराव, विघटन और सर्वनाश प्रारम्भ हो गया है। संकीर्ण होकर जो जीवन रूपी शकट को भरेगा प्रभु उसकी शकट को उलट देंगे।

भगवान शकट को भरने को मना नहीं करते हैं। प्रभु को शकट के ऊपर बिठाकर भरो। अर्थात शकट नारायण आपका है। हम निमित्त हैं आपके ! संसार आपका है ! शकट संसार सेवा के लिये है। हम शकटासुर नहीं बनेंगे। प्राणी मात्र के होकर, सब में आप हैं ऐसा मान कर इस भरे हुए शकट को सेवार्थ में प्रयोग करेंगे।

कंस तृणावर्त को बुलाता है। उसे नन्हें शिशु की हत्या का आदेश करता है। तृणावर्त गोकुल आता है, वायु में मायावी रूप बनाकर उड़ता रहता है। उसकी निगाहें नन्हें गोपाल पर पड़ती हैं। वासुदेव आँख मूंद कर सो रहे हैं। माँ यशोदा अन्य कार्यों में व्यस्त हैं। बाल कन्हैया नितान्त अकेले एवं असावधान हैं। तृणावर्त उनको उठाकर, वायु का बवण्डर बनके ऊपर उठता है। उसकी इच्छा है कि तेज वायु का बवण्डर बनकर बाल कन्हैया को ऊँचा उठाकर चट्टानों पर पटक कर समाप्त

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

कर दें। तृणावर्त ले उड़ा। प्रभु ने देखा कि माँ यशोदा एवं सब गोप-गोपियाँ, नन्द बाबा सभी भयभीत चहुं ओर भाग रहे हैं। श्री भगवान ने अपनो देह का भार बढ़ाना आरम्भ कर दिया ! भार बढ़ता गया ? तृणावर्त इस असह्य बोझ के नीचे दबने लगा। प्रभु उसे अपने नीचे दबाये अपने भार को तब तक बढ़ाते रहे जब तक तृणावर्त का प्राणान्त न हुआ ? दुष्ट कंस ने फिर मात खाई ! बाल कन्हैया की जय !

'तृण' का अर्थ है तिनका ! 'आवर्त का अर्थ है बवण्डर ! तृणावर्त का अर्थ हुआ जो भारी से भारी वस्तु को भी तिनकों के समान उड़ा ले जावे ! तृणावर्त ववण्डर का रूप धारण करके आता है। प्रभु की लीला रूपी दर्पण में अपने रूप को देख रे भोले भक्त ?

विषयी, मोहान्ध मन रूपी कंस का मित्र तृणावर्त कौन है ? विषय वासनाओं, लिप्साओं, से भरमाये जीव को परिस्थितियों का बवण्डर बनकर उड़ाने, नचाने और नष्ट करने बाला आवेश ही तो तृणावर्त है। चिन्ताओं के भयंकर ववण्डर को प्रगट करके जीव के संकल्प रूपी ईश्वरत्व को नष्ट कर, पाप की ओर प्रेरित करने वाला तृणावर्त ही तो है। प्रभु भक्ति का सुन्दर संकल्प, अपने विचारों से तृणावर्त को समाप्त किये विना, कभी भय मुक्त नहीं हो सकता !

परन्तु तृणावर्त तो हमारे जीवन का पावन धर्म बन बैठा है। समाज शिक्षा, राजनीति सभी में तृणावर्त समाया है। उड़ती धूल और तेज आंधियों के ववण्डर में भटकते हमारे नेता सुधारक, समाजसेवी, चिंतक ठीक से देख नहीं पाते हैं समस्या रूपी पेड़ उन्हें दिखते नहीं हैं, परछाइयों पर कुल्हाड़े चलाते हैं यह मानकर कि यही समस्या का पेड़ है। समस्यायें फूलती पनपती रहती हैं। हर ओर कांटे छितराती समाज को पंगु वनाती रहती हैं और परछाइयों पर चली कुल्हाड़ियों से बने नये गड्ढों में समाज अपने दाँत, टांगे, हाथ, पांव सब तोड़ता रहता है। समस्या का समाधान तो हुआ नहीं, समाधान के नाम पर कुछ नए रोग, नया भटकाव अधिक ओढ़ बैठती है हमारी संस्कृति ! काश ! हमारे नायक और नेता, प्रभु की तृणावर्त लीला दर्पण के अमृत को पी पाए होते। गोविन्द हरि !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

तृणावर्त को वही मार सकता है जो स्थितिप्रज्ञ हो ! तृणावर्त तुम्हारी सभी अच्छाइयों को नष्ट कर समाज और प्राणी मात्र के लिए कलंक वना देगा । न खुद सुख से जियेंगे और न जीने देंगे किसी को ! आज यह महान संस्कृति तृणावर्त से ही तो त्रस्त है । प्रत्येक व्यक्ति को तृणावर्त नचा रहा है । पापी कंस हर ओर ठहाके लगा रहा है । उदास है धरती मैय्या ! कभी कृष्ण लीलाओं से आनन्दित और वरद होती थी । अब तृणावर्त, पूतना और कंस लीलाओं से त्रसित और भयाक्रान्त है । जिन्दगी कैंसर का फोड़ा वन गयी है । न कोई निदान है । हर क्षण दुखता, सड़ता, रिसता रहा । राहत मिली चिता की लकड़ियों पर ! अरे ! यही देव दुर्लभ योनि है; प्यारे भक्त अपने और अपने परिवार में पनपते तृणावर्त को मारने का सुन्दर संस्कार संकल्प लें । वरद हो जीवन तुम्हारा ।

प्रभु की वाल लीलाओं का रहस्य आपको स्पष्ट हो रहा है । उस युग के माता-पिता लीला ज्ञान को धारण कर अपने बच्चों के जीवन को उद्देश्यपूर्ण वनाते थे । सम्पूर्ण लीलाओं का विस्तार आज सम्भव नहीं होगा । इसलिये संक्षेप में रहस्य आपको वताते हैं । गोकुल और वृन्दावन में कंस द्वारा भेजे नाना असुर श्री वलराम एवं भगवान श्री कृष्ण द्वारा उद्धार को प्राप्त होते हैं । 'वत्सासुर' ! जीव की मोहान्धता ! मेरा और पराया भाव । वकासुर ! वक का अर्थ है छल-कपट' दम्भ और ढोंग । जव तक वालक के जीवन से वकासुर का वध नहीं होगा वह प्राणी मात्र के लिए वरदान नहीं बनेगा । धरती का अभिशाप और मानवता का कलंक ही तो होगा ।

वत्सासुर और वकासुर हमारे जीवन का अंग वन गये हैं । उस युग की शिक्षा में प्रत्येक माता-पिता एवं शिक्षाविद् इनको मारकर वालक को कृष्ण वनाने की प्रेरणा देते थे । इसीलिए तो यह संस्कृति नष्ट नहीं हुई । लीलायें उसके जीवन रूपी वृक्ष का मूल (जड़) थीं । जब तक जड़ें नहीं काटो गयीं, समाज, संस्कृति और जाति गुलामी की हजारों साल लम्बी मार खाकर नष्ट नहीं हुई । लीला रूपी शिक्षा स्कूल के नष्ट होते ही पेड़ की जड़ें ही कटने लगीं । अब डालियों और पत्तियों के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

राग अलापते नेता हमें गाली देने लगे हैं। इन जड़ों को आपने ही तो काटा था। अभी वृक्ष नष्ट नहीं हुआ है पुनर्जीवित हो सकता है।

"अघासुर" वध की लीला ! 'अघ' का अर्थ है अज्ञान, पाप और अन्धकार। जो शिक्षा प्रणाली उस बालक के जीवन में अघासुर को न मार सकी; उसे कैसे अमृत कहा जाये ! 'अघासुर' को मारे बिना समाज को नष्ट होने से नहीं बचाया जा सकता। प्रभु अघासुर का वध करके, हमें जीवन का मन्त्र देते हैं।

'धेनुकासुर' का अर्थ है ज्ञान एवं भौतिकता को गधे की तरह लादना। शिक्षा का वाहन आज धेनुकासुर ही तो है। हम ग्रन्थों को रटकर डिग्री बटोरना चाहते हैं। हमारे जीवन में उस ज्ञान के साथ अद्वैत कहाँ हो पाता है।

एक बार एक डाक्टर (साइकोलोजी) हमसे मिलने आईं। डाक्टरेट का विषय था, चाइल्ड केयर (बच्चों की देखभाल) डाक्टर साहब पढ़ाती भी हैं और इसी विषय पर उन्होंने एक नया अनुसंधान ग्रन्थ भी लिखा है। उनसे एक ही बालक है, और वे उसे इतना मारती हैं कि बेहोश हो जाता है। ऐसा प्रायः होता है। बाल विशेषज्ञ हैं वे। डिग्रियाँ हैं उनके पास ! नये अनुसन्धान भी इस दिशा में किये हैं। सम्भवतः इस बार राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित भी हों, और अपने ज्ञान का लाभ देने के लिए विदेशों में भी भ्रमण हो उनका। धेनुकासुर की जय।

भौतिकता में धेनुकासुर जो छाया तो उसने मनुष्य को धन पशु बनाकर रख दिया। ब्रह्मा जी ने नाना पशु पक्षी बनाये। अब ब्रह्मा भी हैरान हैं कि यह नया पशु (धन-पशु) कहाँ से प्रकट हो गया। मैंने तो बनाया नहीं। कोई नये ब्रह्मा प्रकट हो गये हैं क्या। धेनुकासुर गधे के रूप में विचरण करता था।

लाला जी ने करोड़ों रुपया बटोर लिया है। बड़े करोड़पति हैं। परन्तु डाक्टर ने खुराक बाँध रखी है—लाला जी आपको डायबिटीज भी है, हाईपरटेंन्शन भी, मीठा नहीं खाना। नमक भी नहीं लेना। थोड़ी सी उबली सब्जी, दो सूखी रोटी। एक टीका सुबह, एक टीका शाम को और दर्जन भर रंग बिरंगी गोलियाँ। आप ही बताओ, भारत में कुत्ता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आज भी बढ़िया खाना खाता है और टीके नहीं लगवाता है। लाला जी न खा सकते हैं न किसी को खाने दे सकते हैं। धेनुकासुर भी न फल खाता था और न बालकों को खाने देता था। श्री बलराम ने उसको मारकर हमें स्वयं से, अपने बालकों के जीवन से तथा समाज से धेनुकासुर वृत्तियों को नष्ट करने का अमृतमय ज्ञान दिया। काश ! हम धेनुकासुर से पुनः मनुष्य बन पाते।

'प्रलम्बासुर' वध की लीला है। परावलम्बन ही प्रलम्बासुर है। हमें स्वावलम्बी होना है ईंट, मकान, तिजोरी के सहारे नहीं, घट-घट वासी आत्मा वसुदेव के सहारे जीना है। प्रलम्बासुर हमारे जीवन को, समाज को, संस्कृति को तथा समूल मानव जाति को नष्ट करने में सक्षम है। इसीलिये प्रभु इनका वध करते हैं।

एक युग वह भी था जब बाल लीलाओं द्वारा सहज बालक, सुबोध, सरस ज्ञान को धारण कर ग्यारहवें वर्ष विषयासक्त मन कंस को मार कर गुरुकुल में प्रवेश पाता था। यही तो कृष्ण लीला है, जो समाज में प्रत्येक बालक को कृष्ण बनाने हेतु थी। प्रभु ने भी ग्यारहवें वर्ष में प्रवेश पाते ही कंस को मारा था। गुरुकुल की शिक्षा उनके जीवन में अमृत का संचार करती थी। आज सिनेमा एवं टेलीविजन में सेक्स ठाँय-ठाँय, हत्या, लूट, दुराचरण का ज्ञान पाते हैं। लीला तब देखते थे, लीला अब देखते हैं। तब कृष्ण बनते थे, अब कंस बनते हैं। यही टेलीविजन और सिनेमा यदि सार्थक प्रयोग में लाये जायें। मनुष्य धरती का भगवान बने। धरती स्वर्ग हो जाय। नेता, समाज सुधारक हमें दोष देंगे। लीलाओं को कीचड़ बतायेंगे और……… ।

जब बचपन लीलाओं के अमृत से सींचा जाता था तबकी बात कुछ और थी। वह राजा था। उसके पास समर्पित सेनायें थीं, सुख, वैभव ऐश्वर्य था। सब कुछ था। समय आया और सब कुछ त्यागकर वह वानप्रस्थी हो गया। फूस की कुटिया में जा बैठा। आज तुम एक दीवार नहीं छोड़ पाते। पिता पुत्र में मुकदमा और गोली चलेगी मकान की खातिर ! कारण ? पहले तुम 'प्रलम्बासुर' का अपने जीवन में वध करते थे, आज तुम 'प्रलम्बासुर' के बन्धक हो। बन्धक की क्या मजाल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

जो स्वामी के विपरीत जाये।

एक स्वामी जी से मिलने गये। उदास बैठे थे। पूछा क्या हुआ ? क्यों उदास हैं ? अस्वस्थ हैं क्या ? कहने लगे, कीमती टी० वी० लाये थे। चेले ने पटककर चकनाचूर कर दिया। हमने कहा, "स्वामी टी० वी० लाल जी, इसके अतिरिक्त भी कोई रोग है ?" कहने लगे, 'आपने टी० वी० लाल क्यों कहा ?' उत्तर दिया "टूटा टी० वी० था और टूटे आप नजर आ रहे हैं तो आप टी० वी० ही तो हुये।' प्रलम्बासुर की जय बोलो।

सनातन आश्रम में वहुत सारी मातायें कारों में बैठकर आयीं। उनके बच्चों को 'आया' उठाये थी। आधुनिक वेशभूषा और श्रृंगार उनको भारतीय कम, विदेशी अधिक दिखा रहा था। कहने लगीं, ',स्वामी जी, हमें भागवत की कथा सुनाओ।" इस सन्यासी ने उत्तर दिया, "भागवत कथा तुम्हारे समझने योग्य है ही नहीं।"

"क्यों ? स्वामी जी ?" उन्होंने पूछा।

इस सन्यासी ने उत्तर दिया, "भागवत की कथा में फूहड़ गवाँर गोपियां पराये लाल में भी भगवान देखती हैं, और तुम्हें अपने लाल के लिए 'आया' (नौकरानी) चाहिए तुम क्या सुनोगी भागवत। भागवत की कथा और लीला का उद्देश्य था कि हम अपने बालक में ईश्वर देखें उसकी सेवा तथा लीला का आनन्द लेते हुए, उसे ईश्वर बनावें। गन्दे विचार रूपी असुरों का वध करावें।"

भागवत को सुनता है परीक्षित। अति विद्वान, लोभी, दम्भी, सुनकर भी नहीं सुन पाता। क्यों ? उसका मन विषयों का चिन्तन कर रहा है, कान उसके वन्द हैं दम्भ उसमें हर क्षण (यदि वह कुछ सुन पाए) विरोध उत्पन्न करता है। छिद्रान्वेषण लीला के अमृत को लोप कर केवल दोष दिखलाता है। ऐसे लोग तो सहानुभूति के पात्र हैं।

एक विद्वान भक्त आये और कहने लगे, "सनातन स्वामी, भागवत में लिखा है कि धुन्धकारी प्रेत हो गया था। क्या तुम दिखा सकते हो ? पूछा, "यदि हम दिखा दें तो तुम पहचानोगे कैसे ?" उसने उत्तर दिया, "प्रेत के पैर उल्टे होते हैं। एड़ी आगे रहती है और पंजे पीछे।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

संन्यासी ने कहा, "तब तो जितने कहो प्रेत और चुड़ैल दिखा दूं तुमको। जाना था प्रभु की राह, जा रहे हैं विषयात्मक जगत को एड़ी आगे और पंजा पीछे ही तो हुआ। बोलो कितने प्रेत देखोगे ?" नाराज होकर चले गये। पता नहीं क्यों ?

मथुरा में प्रकट हुए वासुदेव, गोकुल आते हैं। पूतना, शकटासुर और तृणावर्त आदि लीलायें गोकुल में होती हैं। फिर नन्द बाबा उन्हें वृन्दावन में ले जाते हैं। 'अघासुर', 'बकासुर', 'वत्सासुर', धेनुकासुर' 'प्रलम्बासुर' आदि लीलायें वृन्दावन की हैं। रासलीलायें भी वृन्दावन में होती हैं। इसका रहस्य क्या है ?

बाल कन्हैया ग्वाल बालकों के साथ गौएं चराने जाते हैं। कन्हैया को देखकर गोपियाँ एवं गौएं अपने बच्चों को भूलकर कन्हैया के लिए व्याकुल हो उठती हैं। अपने बच्चों की उपेक्षा करती हैं। प्रभु उदास हो उठते हैं। उन्हें अच्छा नहीं लगता है। महाप्रभु लीला रचते हैं। उनकी माया से ब्रह्मा जी भ्रमित हो जाते हैं। उनके मन में अनायास सन्देह उत्पन्न हो उठता है। कृष्ण सचमुच सृष्टा ही है ? अपने सन्देह को दूर करने हेतु ब्रह्मा जी धोखे से बछड़ों एवं बालकों का अपहरण करके ले जाते हैं। देखें अब कृष्ण क्या करेंगे ? जब गौएं अपने बछड़ों के लिए तड़पेंगी और गोपियाँ अपने बच्चों के लिए बिलखेंगी, कृष्ण से पूछेंगी बच्चे कहां हैं ? तब देखना है कन्हैया क्या करेंगे ?

गोपाल मन ही मन मुस्कराते हैं। ब्रह्मा जी बछड़ों को और बालकों को लेकर ब्रह्मलोक चले जाते हैं। वहाँ उनकी एक वर्ष की समाधि लग जाती है। बछड़े एवं बालक एक वर्ष (पृथ्वी के) तक ब्रह्माजी के यहां ही रहते हैं।

श्री भगवान लीला रचते हैं। वे बछड़ों एवं ग्वाल बालकों के रूप में स्वयं को ही प्रकट कर देते हैं। एक से, अनेक हो उठते हैं। सांझ ढली। बछड़े लौटे, गोपाल और सारे ग्वाल लौट चले। किसी को कुछ सन्देह भी नहीं है। सब प्रसन्न हैं। अपने-अपने बाल को पाकर मुग्ध हैं। वे क्या जाने कि हर रूप में गोपाल ही हैं। उन्हें अपने बच्चों से भी आज वैसा ही प्यार है जैसा कन्हैया से है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

उधर ब्रह्मा जी समाधि से उठते हैं। पृथ्वी का एक वर्ष व्यतीत हो गया है। शीघ्र ही वृन्दावन आते हैं, तो क्या देखते हैं? गौएं अपने वछड़ों में मस्त हैं। ब्रह्मा जी प्रभु से क्षमा चाहते हैं। वे गोप वालकों एवं वछड़ों को मुक्त करके लौट जाते हैं। वालक एक वर्ष उपरान्त अपने अभिभावकों को रहस्य वताते हैं। वे आश्चर्य चकित रह जाते हैं। वासुदेव से इसका रहस्य पूछते हैं! नन्हें कन्हैया उन्हें वताते हैं कि वालक जो कह रहे हैं सो ठीक है। ब्रह्मा ने, कन्हैया की इच्छावश ही ऐसा किया था और कन्हैया ही प्रत्येक रूप में सब जगह लीला कर रहे थे।

"नारायण! आपने ऐसा क्यों किया?" गोपियां पूछती हैं। "तुम सब मुझको ही प्यार करती थीं। मेरे पीछे दीवानी घूमती थीं। अपने वच्चों की निरन्तर उपेक्षा करती थीं। मुझे यह सब नहीं भाता था। मैं सवमें हूं। ऐसा जानकर जो मुझे प्राणी मात्र में भजता है, वही मेरा सच्चा भक्त है। तुम्हारे अज्ञान को दूर करने के लिए ही मैंने ब्रह्मा के मन में संशय उत्पन्न किया। जाओ! अपने पति में, परिवार जनों में, सम्बन्धियों में, वालकों में, मैं ही हूं! गोपाल ही विराजते हैं। गौओं में, वछड़ों में, प्राणी मात्र में, मैं ही हूं! ऐसा जानकर सबसे ऐसा ही प्यार करो। ऐसी भावना करके प्राणीमात्र की सेवा करो। यही रहस्य समझाने हेतु ही मैंने लीला की है।" श्री भगवान उन्हें जीवन का अमृत पिलाते हैं!

उस युग के लोग इस लीला द्वारा अपने जीवन को अमृतमय वनाते थे। यह लीलाएं उनके जीवन को सार्थक वनाती थी। लीलाओं द्वारा शिक्षित समाज प्राणीमात्र के सुख के लिए ही जीता है! इसी मन्त्र से संगठित होता था। धरती स्वर्ग वनती थी। अभाव पीड़ाओं का था। हर क्षण सुख के थे!

आज शिक्षा का उद्देश्य है कि एक परिवार के सीमित सुख और ऐश्वर्य के लिए सारे समाज को निचोड़ लूं! अच्छी नौकरी! वढ़िया वेतन और खूव मोटी घूस!

जब शिक्षा का उद्देश्य मात्र इतना ही है तो आप ही वताओ कौन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
सुखी होगा ! क्या यह राष्ट्र संगठित रह पावेगा ? मैं फौजी मेजर हूं अथवा डाक्टर ! पुलिस का अफसर हूं अथवा वैज्ञानिक ! जज हूं अथवा इन्जीनियर ! तुम्हीं बताओ तुमने मुझे पढ़ाया क्यों था ? एक सीमित परिवार की संकीर्ण उपलब्धियों के लिए ही तो ? फिर ऐन्टी-करप्शन विभाग क्यों बना रहे हो ! करप्शन के लिए ही तो अबोध अवस्था से तुम मुझे पढ़ाते आ रहे थे। तुम ईमानदारी से बोले। वर्तमान शिक्षा प्रणाली और उसके निहित उद्देश्यों की सौगन्ध तुमको ! क्या मैं तुम्हारे देश की सीमाओं की चौकसी ईमानदारी से करूगा ? अथवा स्मगलर से धन लेकर परिवार को सुखी करूगा। जिसके लिए संकीर्ण बनाया तुमने मुझको ! आज यदि मैं ईमानदार हूं। देश जाति और संस्कृति के प्रति श्रद्धा और प्यार का भाव मुझमें है। उसका कारण मेरा पारिवारिक धार्मिक आस्थावान वातावरण है न कि राष्ट्रीय शिक्षा ! कल की पीढ़ियों का क्या होगा ? तुम्हें उन्हीं अबोध नन्हें भोले चेहरों की सौगन्ध ! सच-सच बताओ ?

भक्तगण ! प्रभु की लीलाओं का ज्ञान प्रत्येक स्तर पर अमृत था। ग्यारह वर्ष की लीलाये नन्हें शिशु के बाल्यकाल को अमृतमय तो बनाती ही थी साथ ही वानप्रस्थ में गए वानप्रस्थी को किस प्रकार ग्यारह वर्ष की सीमा के अन्दर पूतना से कंस तक का वध करके बारहवें वर्ष को कृष्णमय बनाकर तथा तेरहवें वर्ष में अज्ञातवास लेकर स्वयं को पवित्र करते हुए सन्यास में प्रवेश पाना होता था। यही पाण्डवों का वनवास है। वनवास किये बिना कौरवों को जीतना असम्भव है। गीता का ज्ञान भी तभी अमृतमय होगा। समयानुसार इस विषय का विस्तार करेंगे।

'गो' के अर्थ है 'प्रकाश, गाय, ग्रह, नक्षत्र आदि और इन्द्रियां। 'कुल' का अर्थ है 'वंश'। पहले इन्द्रियों के कुल (गोकुल) में प्रभु को प्रकट करो। अन्यथा वृन्दावन में तुम्हें कुछ आनन्द नहीं मिलेगा। जब गोपाल इन्द्रियों में विराज जाये। इन्द्रियां प्रभु को समर्पित होकर ही आचरण और चिन्तन करें तब वृन्दावन में जाओ।

वृन्द का अर्थ है 'समूह'। वन का अर्थ है 'जंगल। तब विचारों के समूह रूपी वृन्दावन में 'अघासुर', 'बकासुर', 'वत्सासुर', 'धेनुकासुर'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

आदि असुरों का वध करो । स्वयं को सुखद, वरद एवं नित्यानन्द को प्राप्त कराने को प्रभु लीलाओं का अमृत पियो ।

इन्द्रियाँ बने गोकुल और विचार, पूर्णरूपेण वृन्दावन । तब चलो कंस को मारने मथुरा । 'मथ' 'उरा' ।

मथ का अर्थ है 'मन्थन' और 'उरा' का अर्थ है 'हृदय रूपी प्रांगण' मार दे विषयी मन कंस को । पहुंच यमुना के किनारे ! यमुना के किनारे ? अर्थात जहां यमु (यमराज) 'ना' अर्थात नहीं है । मृत्यु नहीं है जहां ! मेरा गोपाल है वहां ! गोविन्द हरि !

मार के कंस को; उग्रसेन रूपी तपस्या को, देह रूपी सिंहासन दो । वसुदेव, देवकी को मुक्त कराओ ! वसुदेव आत्मज्ञान और देवकी ? आत्मा को ही समर्पित होकर जीने की 'प्रतिज्ञा' रूपी 'देवकी' को जीवन धारा बनाओ ! फिर सान्दिपनि ऋषि रूपी अध्यात्म की वेदगंगा में तपो । लीला से जीवन का रोम-रोम सींच डालो ! हर क्षण सींच डालो ! फिर लौट वासुदेव को; घट-घटवासी आत्मा को देहरूपी मथुरा के सिंहासन पर विठाओ । आनन्द ही आनन्द हो !

वेद ने कहा कि जीवन का प्रत्येक क्षण जल रहा है । लौटकर मिलना कहां है ? चाहे तो इसे विषय, वासना, अज्ञान, ईर्ष्या, द्वेष, लोभ मोह और संकीर्ण नीचताओं में सड़ा कर जिए अथवा जीवन को ही यज्ञ मानकर प्रभु भक्ति के अमृत में मस्त सुखी होता तू प्राणीमात्र के सुख के लिए जिए ।

'ईश्वर' कहा उसको जो प्राणीमात्र को ऐश्वर्य दे । जो जीवमात्र को जीवन तो दे ही और उनके जीवन को ऐश्वर्यमय बना दे । प्राणी मात्र के सुख के लिए स्वयं को मिटा दे—सो ईश्वर है । जो दूसरों का ऐश्वर्य लूटकर सोने की लंका बनावे । सो पिशाच !

महारास और रासलीलाओं का भी यही रहस्य है । प्रत्येक गोपी अपने गोप में ही कृष्ण की भावना करती मस्त नाच रही हैं । जीवन के क्षण जो लड़ाई-झगड़े और ईर्ष्या, द्वेष, अभाव से त्रस्त होकर व्यतीत हो रहे थे, अब गृहस्थ में कृष्ण की भावना से असीम सुख और अमृत बन गये

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

है। गोप और गोपी का दाम्पत्य कृष्ण-राधा की भावना से ईश्वरीय एवं अलौकिक हो उठा है। जिन्दगी सुखद, वरद और अनुपम हो उठी है! काश! तुम भी इन लीलाओं के अमृत को पी पाये होते।

लीलायें समाज को उसकी इकाई (परिवार) के स्तर तक पवित्र करती थीं। उनके जीवन में वेद एवं सूक्ष्म अध्यात्म को सरल, सरस, एवं व्यवहारिक बनाकर उनके जीवन रूपी आँगन के कांटे बुहार देती थीं। मनुष्य में ही; हर घर, ईश्वर का अवतार होता था! मनुष्यता को ईश्वरत्व तक उठाने की कथा ही कृष्णलीला है।

चीर हरण की लीला! वस्तुतः यह लीला कालान्तर में कृष्ण-लीलाओं के साथ जोड़ दी गई। यह लीला नहीं वरन वेद की ऋचा को स्पष्ट करने वाली कलाकृति थी जिसे लीला का रूप दे दिया गया। कृष्ण के सामने गोपियाँ नंगी! अर्थात् आत्मा के सम्मुख जीव मात्र नंगा ही तो है। कपड़े से बाहर का तन ही तो ढका जा सकता है। जो देह के भीतर बैठा है उससे परदा कैसे करोगे? तथा आत्मा से मिलना है तो तथाकथित सांसारिक मुखौटे उतार कर अनन्य भाव से मिलो।

स्वयं को तो धोखा मत दो! अपने अन्तर में तो सत्य को पूर्ण नग्नता से स्वीकारो! उस पर परिस्थितियों, वाद और मुहरों के आवरण मत चढ़ाओ! गोविन्द हरि! कृष्ण लीला में भी चीर हरण की लीला के समय कृष्ण की आयु छह वर्ष दिखाई गई है। अभी हम वृन्दावन में हैं। गोपाल बालकों के साथ गौओं को चराने जाते हैं। वासुदेव नंगे पाँव हैं। नन्दबाबा उनके लिए चप्पलें लाते हैं। गोपाल पहनने से इंकार कर देते हैं। कहते हैं, मेरे सखा सारे तो नंगे पांव हैं मैं कैसे जूते पहनूं? गरीब ग्वाल तो सिले वस्त्र भी नहीं पहनते हैं। प्रभु भी सिले वस्त्रों (जो नन्दबाबा मथुरा से लाये हैं) को फेंक देते हैं। जो मेरे मित्र नहीं पहन सकते; मैं भी नहीं पहनूंगा! नन्दबाबा दुखी हो जाते हैं। परन्तु वे भी क्या करें? कंस कर (टैक्स) बढ़ाये जाता है। बछड़े भले प्यासे-भूखे मर जायें। कंस को ढेरों मक्खन कर (टैक्स) में जाना चाहिए। कंस को कर दिये बिना उसके प्रदेश में रहना भी तो असंभव है। गरीब गोप और गोपियां अपने बच्चों को भी दूध और मक्खन नहीं

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

देखीं ! कंस को 'कर' में यदि समय पर सामान न पहुंचा तो वह पापी सबको वहुत सतादेगा । वच्चों से छिपाकर दूध और मक्खन रखती हैं ।

नन्हें कृष्ण का हृदय विद्रोह की अग्नि से धधक उठता है । 'कंस' और उसके दुष्ट पहलवानों और आततायी सैनिकों के लिए अव कर के रूप में सामान नहीं जायेगा । वाल कन्हैया ने अपने साथियों में घोषणा की । कैसे ? कन्हैया, भला असम्भव को सम्भव कैसे कर दिखायेंगे ।

कृष्ण ने कहा, "दूध पर पहला अधिकार तो वछड़ों का है, उपरान्त हम वालकों का है । हम लोग अपनी वाल सेना वनायेंगे । हर वालक छिप कर देखेगा कि माँ मक्खन कहाँ छिपाकर रखती हैं । फिर हम लोग चुराकर सारा मक्खन खा जायेंगे । जव मक्खन होगा ही नहीं तो नन्द वावा कंस को देने भी नहीं जायेंगे । वछड़ों के साथ हम अन्याय नहीं होने देंगे । यदि घर के लोग उसे पूरा दूध नहीं देंगे । तो हम उनकी नजर वचाकर वछड़ों को खोल देंगे । वोलो ठीक !" सवने कहा, ठीक ! वोलो वाल कन्हैया की जय ! रे माखन चोर अव कव मिलेगा तू । तेरी छवि के दर्शन को भक्त मात्र की आँखें तरस रही है । गौएं आज भी ढूंढ़ती फिरती हैं तुमको । भोली गोपियां माखन मिसरी लिए हाथ में, तड़प रही हैं । कब मिलोगे तुम ! हे प्राणाधार ।

गायों को लेकर चराने जाते हैं । 'काली दह' पर भयंकर कालिया नाग रहता है । जल को विषाक्त कर देता है । भोले वछड़ों को खा जाता है । गौओं को मार देता है । जहां गौएं कटती हों उसे तुम कालिया नाग का स्थान जानो । जो उनकी हत्या करके उन्हें खा रहे हों उन्हें कालिया नाग जानो । भोले वछड़ों की हत्या हो और आज के समाज सुधारक और नेता उसे उचित वतावें । तुम्हीं बताओ वे कौन हैं ? क्या उन्हें संस्कृति और धर्म के प्रति कुछ कहने का अधिकार है ? ठेके का दम फिर भी वे ही भरते हैं । वे ही धर्म, संस्कृति और मानवता के चिन्तक बिचारक, सुधारक और ठेकेदार हैं । सारे सन्यासी ढोंगी हैं ! पापी हैं ! धूर्त हैं ! समाज को ठग रहे हैं ! यही नारे वे और उनके अनुयायी लगाते मिलेंगे आपको । श्री हरि ! गोविन्द हरि ! ! प्रभु कैसी परीक्षा ले रहे हो तुम !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रभु की लीला का रहस्य जाना ! जिसने दस इन्द्रियां रूपी दस फन वाले कालिया नाग को नथ लिया, वही तो मेरे प्रभु को जानेगा। इन्द्रियां ही तो कालिया नाग हैं जो हमको काल के पंजों में फंसा देती है तथा कालातीत कृष्ण से छुड़ा देती हैं। सो कालिया नाग को नथ।

कालिया नाग को वही नाथ पावेगा जो अपने जीवन में पूतना आदि असुरों का वध कर आया हो। प्रभु, लीलाओं द्वारा हमें हमारा धर्म राह एवं गंतव्य स्पष्ट कर रहे हैं। रे भक्त मात्र ! गोपाल कितना प्यार करते हमको ! लीलाओं द्वारा हमारी राह प्रकाशित कर रहे हैं। आओ आज कालिया नाग को नथ डालने का संकल्प कर डालें। सारे असुरों को विचारों से मिटाकर इन्द्रियों को गोकुल बनावें; विचार वृन्दावन हो और देह मथुरा। यमुना के तट निर्भय प्रभु स्मरण चिन्तन, आचरण में तपें। जय हो तुम्हारी।

प्रभु की रास लीलायें बाल्यावस्था तक ही सीमित हैं। ग्यारहवें वर्ष में प्रवेश पाते ही कंस का बुलावा आया। मथुरा गये गोपाल और फिर लौटे ही नहीं। लौटने का वायदा करके जो गये तो गोकुल और वृन्दावन तड़पता ही रहा। गोविन्द न आये। कंस को मार वसुदेव और देवकी को मुक्त कराया। राजा उग्रसेन को जेल से मुक्त कराकर गद्दी पर बैठाया। राजा उग्रसेन कंस के पिता हैं। उसके उपरान्त, वासुदेव सान्दीपनि ऋषि के यहाँ पढ़ने चले गये। उस समय ग्यारहवें वर्ष ही बालक ऋषि कुल में पढ़ने जाता था। वहीं प्रभु का मिलन सुदामा जी से हुआ। लौटकर आये तो राजा उग्रसेन ने पद त्याग दिया। पच्चीसवें वर्ष श्री कृष्ण मथुराधीश हो गये। मथुरा का सिंहासन उनकी मनोहारी छवि से सुशोभित हो उठा। पचास वर्ष की अवस्था तक वे मथुराधीश रहे। इसी समय आप मथुरा त्याग कर द्वारिका जा वसे। भगवान ने पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन किया। इक्यावनवें वर्ष में उनका प्रथम विवाह रुक्मणी से हुआ। यह विवाह भी प्रभु ने उनकी प्रार्थना पर उसके उद्धार हेतु किया। ऐसा उज्जवल चरित्र था उनका। इक्यावनवें वर्ष ही जब विवाह का समय था तब श्री भगवान वृन्दावन पधारे। गोप, गोपियाँ, नन्द तथा यशोदा जी को द्वारिका लिवा कर ले गये। उनकी उपस्थिति में ही विवाह होगा ऐसा भगवान वासुदेव का संकल्प था।

जो उनके जीवन वृत्त से कतई अनभिज्ञ हैं वे ही उनकी लीला में
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran
कीचड़ देखते हैं। कीच थी आँखों में अपनी, संसार सारा कीचड़ से सना नजर आ रहा था। ऐसे तथाकथित समाजी सहानुभूति के पात्र हैं। क्या शुकदेव जैसी तपस्वी किसी साधारण व्यक्ति की कथा सुनाते और आसन्नमृत्यु का वरण करते महाराज परीक्षित मोक्ष हेतु उनकी लीला सुनते ? जब प्रभु तीन वर्ष के थे तब श्री राधा विवाह कर गोकुल में आई थीं। एक छोटे बालक का प्रेम ही तो श्रीकृष्ण व राधा की पवित्र जोड़ी है। छोटे बालक की अध्यात्म लीला में तो उनको सारा व्यभिचार दिख गया, परन्तु जवान बहुओं और बेटियों के साथ सैक्सी फिल्में देखते समय उन्हें जरा भी लज्जा शर्म नहीं आती। उनके द्वारा भ्रमाई; समाज को भटकाने वाली फिल्मी माताएं भी आपको हर घर, चौराहे पर कीचड़ उछालती मिलेंगी। बालक की लीलाओं में तो गंदगी है परन्तु उनके पति को लात मार कर, तथाकथित समाजाचार्यों के साथ दिन-रात स्वच्छन्द घूमना अति पवित्र है। बलिहारी तो उन 'बुद्धि प्रकाशों' की है जो विवेकहीन होकर उनके प्रलाप को सुनते हैं परन्तु आत्मस्थ होकर स्वयं निर्णय नहीं करते। उनको लम्बा लेक्चर देकर जब उनकी श्रीमती को भी ले उड़ते हैं तथाकथित समाज सेवा हेतु, तो भक्त राज चौराहों पर रोते नजर आते हैं। उन्हें कृष्ण लीला भले समझ में न आयी हो परन्तु यह लीला तो अच्छी तरह समझ में आ जाती है। गोविन्द हरि !

रास लीला जीवन का अमृत है। तपस्या का मन्त्र है। प्रभु प्राप्ति का सहज सूत्र है। कन्हैया प्रत्येक गोपी के साथ रास कर रहें हैं। कन्हैया ही घट-घट वासी आत्मा है और जीव मात्र ही गोपी है। आज भी नारायण घट-घट वासी होकर, एक साथ, एक समय में, हर ओर सर्वत्र सचराचर में जीव रूपी गोपियों के साथ रास करते हैं आत्मा होकर वे ही इस देह रूपी बांसुरी में प्राणों को फूंक रहे हैं। उन्हीं के सुख से जीव रूपी गोपी सुखी है, जीवित है, ज्ञान और विवेक को प्राप्त है जिस दिन चल लिए त्याग के इस देह को गोपाल ! चिता की लकड़ियों पर काल-यवन खायेगा इसको ! रास लीलाओं के सूक्ष्म ज्ञान को जीवन के सूक्ष्म

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

रहस्यों को; उत्पत्ति के गूढ़ रहस्यों को तथा ईश्वर प्राप्ति के सरल सहज मार्ग को नाटकीय सरल एवं मधुर ढंग से समझाया है। भगवान वेदव्यास जिन्होंने वेद दिये उन्होंने ही यह लीला ग्रन्थ भी दिये हैं। एक सत्य ; दूसरा असत्य। एक पुण्य ; तथा दूसरा पाप। कैसे हो सकते हैं ? यदि इतनी सी बात हमारे मित्रों की समझ में आ जाती तो वे शायद इतना न भटकते और न ही समाज को भटकाते जिनके कभी गुलाम थे वे ; अभी भी उनकी चौदह सौ साल पुरानी जूठन को धर्म के नाम पर लादते फिर रहे हैं, मूर्ति पूजा ढोंग है और प्रभु सप्त लोक पर निराकार होकर रहते हैं। मुहर अभी छूटी नहीं है। उनकी ही 'बी' टीम बने हैं। चारों वेद प्रभु को घट-घट वासी गाते हैं। इन्होंने उन्हें सप्तलोक में कैद करके रख लिया है। इनसे पूछे बिना अब वे धरती पर आ ही नहीं सकते। इनके भीतर अब भगवान हैं ही नहीं, सातवें आसमान में जो बैठे हैं। जहाँ से भगवान हट जाये वहाँ शैतान का वास होता है, ऐसा हमने पूर्वजों से सुना है। यही तो कृष्ण और कंस की राम और रावण की कहानी है।

यहाँ पर यह भी स्पष्ट कर देना चाहूंगा कि आदिकाल से ही देश का नाम भारत रहा है। ऋग्वेद के प्रथम सूक्त से ही इसका आरम्भ हो जाता है। 'भरत' नाम भरण पोषण करने वाले, भरतार अर्थात परमेश्वर का हैं। भरत अपत्यम्=भारतम् ! भारत का अर्थ हुआ परमेश्वर के पुत्रों का देश ! भारत में रहने वाले=भरतवंशी।

हिन्दु शब्द फारसी भाषा की गन्दी भद्दी गाली है। जिसका उन्हीं की भाषा में अर्थ है चोर, डाकू, गुलाम, काला, काफिर (नास्तिक) आदि। जहाँ पर भी इस शब्द का प्रयोग इस सन्यासी ने किया है केवल बात को स्पष्ट करने के लिये है। अन्यथा आदि मान्यता के अनुसार हिन्दु भ्रामक शब्द का परित्याग करके हमें भरतवंशी शब्द का ही प्रयोग करना चाहिए। (इसका विस्तार देखें ..विश्व भारती संगठन)

बाल हठ के सम्मुख नन्द बाबा भी हार मान लेते हैं। मन ही मन भयभीत भी हैं। 'कंस' को 'कर' के रूप में कुछ नहीं भेज पा रहे हैं। ब्रह्मा ने भी प्रभु की परीक्षा लेनी चाही और उनको वासुदेव से क्षमा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

माँगनी पड़ी। गोवर्धन लीला में इन्द्र को भी झुकना पड़ा। कन्हैया की इच्छा का हम सबको सम्मान करना चाहिए।

उधर कंस भी जान गया है कि उसका शत्रु साधारण नहीं है। सम्पूर्ण यादव जाति में विद्रोह की ज्वाला भड़क उठी है। नन्द ही नहीं वरन् सम्पूर्ण आधीन राजाओं ने कंस को 'कर' भेजना बंद कर दिया है। इतने भयंकर विद्रोह को युद्ध द्वारा दबा देना सम्भव नहीं है। क्यों न छल से बलराम और श्रीकृष्ण को यहाँ पर बुला कर मरवा दूँ। यदि और किसी को भेजूंगा तो नन्द सशंकित हो, कृष्ण, बलराम को नहीं भेजेंगे। किसी ऐसे व्यक्ति को भेजना चाहिए जिस पर उन्हें सन्देह न हो तथा रत्नादि का उपहार देकर भेजना चाहिए। जिससे उनको कंस की भावना पर भी संदेह न हो। कंस ने यज्ञ रचाया। अक्रूर जी को श्री कृष्ण और बलराम को लिवा लाने, स्वर्ण रथ लेकर भेजा। साथ में रत्नादिक, वस्त्र तथा नाना भेंट लेकर जाने को कहा। अक्रूर जी, नन्द जी के परम मित्र हैं। परम स्नेही एवं सम्बन्धी हैं। दोनों को आपस में असीम प्यार है। कंस ने अक्रूर जी को भी अँधेरे में रखा। अपनी असली मंशा का भान तक भी न होने दिया। अक्रूर जी भक्त हैं। सच्चरित्र हैं। तपस्वी हैं। वे भोले अवश्य हैं परन्तु मूर्ख नहीं हैं। उनके मन में भी कंस की चाल सन्देह बनकर छू जाती है। राजाज्ञा का पालन करना उनका धर्म है। उन्हें दो दिन बाद कृष्ण से मिलने जाना है। इससे पूर्व ही उन्हें भी कुछ करना है। अक्रूर जी अपने विश्वासपात्र सेवकों को हर ओर भेज रहे हैं। सभी यादव तथा क्षत्रिय राजाओं के पास जो कंस के अधीन तो हैं परन्तु वसुदेव के परम हितैषी हैं; तथा जो कंस से नाराज भी हैं। अक्रूर जी जानते हैं कि कृष्ण और बलराम वसुदेव के पुत्र हैं तथा कंस उन्हें मिटाने हेतु यज्ञ रचा रहा है। पापी की बुद्धि नष्ट हो जाती है। धर्मात्मा सहज बुद्धि से समाधान ढूढ़ लेता है। आश्वस्त होकर अक्रूर जी अपने प्यारे गोविन्द के दर्शन को चल देते हैं।

नन्द जी के द्वार पर अक्रूर जी का स्वर्ण रथ रुक गया है। वे रथ से उतरते हैं। अतिथि सेवा हेतु नन्द जी दौड़कर आये हैं। अक्रूर जी को देखकर उन्हें असीम आनन्द प्राप्त हुआ है। अक्रूर जी और नन्द बाबा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

एक दूसरे से लिपट गये हैं। नेत्रों से अविरल जल की धारायें प्रवाहित हैं। रोम-रोम पुलकायमान है। उनके सुख की कल्पना कौन कर सकता है।

निष्पाप नन्द, तपस्वी अक्रूर जी को घर में लेकर आये हैं श्री वलराम एवं भगवान श्रीकृष्ण उन्हें प्रणाम करने आये हैं अक्रूर जी उनके दर्शन करते ही समाधिस्थ हो गये हैं। अपलक उनकी नयनाभिराम छवि को निहार रहे हैं। नेत्रों से अविरल अश्रु धारायें प्रवाहित हैं। उन्हें समय का भान भी नहीं रहा है। अपने हाथों में वासुदेव का हाथ थामें जाने कहाँ खो गए हैं। उस दृश्य का वर्णन करना अति कठिन है। गोविन्द हरि ! हरि ॐ ! नारायण हरि ! भक्तगण समय का भान कथा का अवरोध वना हुआ है। अवरोध भी अति सुखद है। गोपाल की जन्माष्टमी जो है। एक सहस्त्र युग भी आप कथा सुने मुझे सुनाने का सुख है। उनकी छवि के वर्णन दर्शन का लालच है। हर क्षण को उनसे छूकर विताने की उत्कट प्यास है मुझको। आप सुनने का आनन्द ले रहे रहे हैं मैं सुनाने का आनन्द तो ले ही रहा हूं। देखने का भी अवर्णनीय आनन्द मिल रहा है। अक्रूर समाधिस्थ मेरे वासुदेव में खो गया है। दाढ़ी आँसुओं से भीग गयी है। उनके रेशमी वस्त्रों पर टप-टप आंसू गिर रहे हैं, लकीरें वनाते वस्त्रों में ही लोप हो जाते हैं। मेरे गोपाल धीरे से स्वयं को अलग करके वहाँ से हट जाते हैं। वे जानते हैं जव तक प्रभु हटेंगे नहीं पवित्र अक्रूर स्वस्थ नहीं होंगे। इसीलिए भगवान श्री वासुदेव, श्री वलराम जी के साथ वहाँ से हट जाते हैं।

अक्रूर जी तपस्वी नन्द से श्रीकृष्ण और वलराम को कंस के यज्ञ में भेजने के लिए कहते हैं तो नन्द वावा स्तब्ध रह जाते हैं। वे भावी आशंका और भय से जड़ हो जाते हैं। उनकी मन:स्थिति को अक्रूर जी की खोजी आंखें भांप लेती हैं। अक्रूर उनके कन्धे पर प्यार से हाथ रख देते हैं और फिर उनकी सारी पहेली स्पष्ट करके वताते हैं। उन्हें समझाते हैं कि अव समय आ गया है जव मयुराघोश को प्रकट होकर कंस का उद्धार करना चाहिए। कंस की तैयारियों को सविस्तार समझाकर अपनी ओर से की गयी तैयारियों को भी नन्द को वताते हैं। श्री नन्द

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

बाबा आश्वस्त होते हैं तथा स्वीकारात्मक सिर हिलाते हैं। मुँह से कुछ कह भी नहीं पाते हैं। मानो बोलना भूल ही गये हों।

यशोदा जी ने सुना तो फफक कर रो उठी। वृन्दावन में आग की तरह यह सूचना फैल गयी कि अक्रूर जी श्री बलराम एवं भगवान श्रीकृष्ण को मथुरा ले जाने के लिए आये हैं, वृन्दावन की एक शाम बहुत उदास हो गई। श्री राधा जी ने सुना तो मूर्छित हो गई! रे अक्रूर! तू क्यों क्रूर हो गया।

गाँव में एक नवविवाहिता दुल्हन बनकर आई थी। चार वर्ष के नन्हें बालक ने उनसे कहा था कि तू मेरी है। फिर नन्हीं बाँहों को फैला कर अपने में समेटना चाहा था। उसका भोला साँवला चेहरा! मोर मुकुट से सजी सुन्दर केशराशि! पीताम्बर ओढ़े हाथ में छोटी सी बाँसुरी लिये! श्री राधा ने उस नन्हें भोले सुकुमार को अपने सीने में भींच कर कहा था, 'मेरे कान्हा! मैं तुम्हारी हूँ।'

'फिर तू मेरे साथ खेलेगी न!'

'हाँ!'

'हर रोज?'

'हाँ कान्हा! हर क्षण!'

'जब मैं बाँसुरी बजाऊं तो समझ लेना मेरा खेलने को मन हो रहा है। आना जरूर। नहीं तो मैं बहुत उदास हो जाऊंगा।' बस चला गया, श्री राधा उसे जाते देखती रही! आज वह सपनों का जादूगर कंस की नगरी जा रहा है। अभी दसवां वर्ष ही तो पूरा होने आया है। कहाँ बालक कन्हैया और कहाँ पापी कंस, उसकी सेना और मल्ल! गोप एव गोपियाँ तड़प रही हैं। गौवों ने चारा नहीं खाया है। मौन सब अपनी पीड़ा पिये जाती हैं। नहीं पी पाती तो फफक कर रो उठती हैं। गोपाल मत जाओ, मत जाओ! उनका अन्तर मन कराहकर चीत्कार कर रहा है। कंस कृष्ण से कुपित है। उसे 'कर' मिलना बंद हो गया है। कंस तुम्हें धोखे से बुला रहा है कन्हैया।

रथ चल दिया है। श्री बलराम एवं भगवान श्रीकृष्ण सबको ढांढस बंधाते, शीघ्र लौटने का वचन देते, श्री नन्द बाबा के साथ रथ पर आरूढ़

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हो गये हैं। अक्रूर जी संग में हैं। रथ जा रहा है। वृन्दावन बिलख रहा है। हवा भी तो चली नहीं, फिर भी कितना भयंकर तूफान उठा है कि प्रत्येक जीव भीतर बाहर से उजड़ के रह गया है। गोप और गोपियाँ अपने बच्चों से कह रहे हैं कि वे दौड़कर रथ का पीछा करें। तैयार होकर रथ के पीछे दौड़ते जायें। कान्हा का अहित न होने पाये। उन्हें समझा रहे हैं कि प्राणों की परवाह न करना। पापी कंस यदि दुष्टता पर उतर आये तो पहले अपने प्राणों का उत्सर्ग करना। तुम्हारे जीते जी कोई कन्हैया को छू भी न पाये। देखते ही देखते गोकुल से बाल युवा यादवों के समूह दौड़े मथुरा जा रहे हैं। कोई किसी के लिए रुक नहीं रहा। दौड़ते हुए गोपों ने कहा कि कन्हैया हम पीछे आ रहे हैं। हमको लिए बिना अब नगर में प्रवेश मत करना। नगर के बाहर वाटिका में ही रुक जाना। समूह दौड़े जा रहे हैं। गोपियों से श्री राधा ने कहा है कि प्रभु की तपस्या में बैठ जाओ। गोपाल के लिए हम हर क्षण तपेंगी। हमारी तपस्या पापी कंस को ध्वस्त कर देगी। वासुदेव का बाल भी बाँका न होगा। वे यमुना मैया की प्रार्थना करती हैं। भोले शंकर को रोकर जगा रही हैं। जगदम्बा की मूर्ति के चरणों में बिछी जा रही हैं। धन्य है वे गोपियाँ ! उनकी पवित्र चरण धूल को, चूम ले रे मन ! उनकी भावना को कौन पहुंच सकता है।

प्यारे भक्त वृन्द ! आपको कृष्ण कथा नहीं सुना रहा हूं। कृष्ण कथा से परिचय मात्र करा रहा हूं। आज का प्रवचन तो कथा का परिचय मात्र है। जिस दिन कथा सुनेंगे गोपाल की, उस दिन, उसी क्षण, विषयी मन कंस नष्ट हो जावेगा। प्रभु की कथा को जो भक्ति, श्रद्धा, आस्था एवं एकाग्र होकर सुनेगा उसके सारे पाप नष्ट होंगे वह महा पुण्य को प्राप्त होगा।

मथुरा में कुम्भ मेले जैसी भीड़ है। हर ओर रथों, घोड़ों, ऊँटों पर सवार पैदल लोगों के समूह निरन्तर मथुरा की ओर बढ़ रहे है। कंस को विस्मय है कि उसने इतना बड़ा यज्ञ तो रचाया नहीं था और न ही उसके पास इतनी बड़ा व्यवस्था थी। इसीलिए उसने किसी को विशेष आमंत्रण भी नहीं दिया था। यहाँ तक कि अपने श्वसुर जरासंध तक को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

सूचना नहीं दी थी। फिर भी मनुष्यों के समूह बाढ़ की तरह मथुरा में धँसते जा रहे हैं। मथुरा के चारों ओर फैलते जा रहे हैं। कंस क्या जाने कि वसुदेव देवकी की वर्षों की जेल की तपस्या तथा कंस के पिता महाराजा उग्रसेन की जेल में की गई वर्षों लम्बी तपस्या आज फलवती होगी। कन्धे से कन्धा छिल रहा है। बाहें फैला नहीं सकते। सड़कों पर आदमी से आदमी चिपका हुआ है। कंस ने कृष्ण को पागल हाथी से कुचलवाने की योजना बनाई थी। हाथी निकलेगा किधर से? कंस के गुप्तचरों ने उन्हें सूचना दी कि सड़कों पर भीड़ में दर्शनार्थी भीड़ वस्तुतः योद्धाओं की है। वे सैनिक हैं। जो विद्रोही राजाओं के साथ दर्शनार्थी भीड़ बनकर आये हैं। पसीने की धारायें कंस के माथे से बह चलीं। उसे लगा जो जाल उसने श्रीकृष्ण व बलराम को मारने के लिए बनाया था? उसमें वह स्वयं फँसता चला जा रहा है। भीड़ दर्शनार्थियों की नहीं है वरन छद्मवेशधारी विद्रोही राजाओं की सेनाओं की है जो बिना लड़े ही नगर में प्रवेश पा गए हैं। कंस का महल, जेल, दरबार सब कुछ उन्होंने घेर लिया है। नन्द बाबा, श्रीकृष्ण, श्री बलराम अपने सखा गोपों के साथ बाहर वाटिका में रुके हैं। वाटिका के चारों ओर यज्ञ के दर्शनार्थ आये दर्शनार्थी सैनिकों की भीड़ है। कंस के लिए वहाँ पहुंचना तो दूर अपने महल से निकलकर नगर में भी घूम नहीं सकता है। बाहर निकलने से डरता है।

नन्द बाबा से आज्ञा लेकर श्री बलराम एवं भगवान श्रीकृष्ण नगर में प्रवेश करते हैं। नगरवासी अति प्रसन्न हैं। जान सब रहे हैं पर बोलते नहीं हैं। वे सब कंस से दुखी हैं। परन्तु जरासन्ध और कंस के आतंक को वर्षों से चुपचाप सहते चले आये हैं। जबसे महाराज उग्रसेन जेल में बन्द हुए हैं बहुत से प्रजाजनों ने स्वेच्छा से सारे सुखों को त्याग कर तपस्या का वरण कर लिया। बहुत से प्रजाजन व्रतादिक करने लगे हैं। शैय्या का परित्याग कर भूमि शयन करते हैं। व्रत करते हैं। अपने धर्मात्मा महाराज उग्रसेन के लिए वे पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर वर्षों से निरन्तर तप रहे हैं। आज वे सब प्रसन्न हैं। सड़कें विद्रोही सेनाओं एवं अधीनस्थ राजाओं द्वारा घिरी हैं। कंस भीगी बिल्ली सा अपने महल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

में कैद है। अपनी चूहेदानी में, स्वयं चूहा बन के फँस गया है। जनता के मन में अपार हर्ष है। आज कृष्ण वलराम स्वतन्त्र नगर में घूमेंगे और कंस कुछ न बिगाड़ पायेगा। कंस भी मन ही मन जान गया है कि अब शतरंज की बाजी उलट गयी है। जरासन्ध से मदद मिलना तो दूर सूचना भी नहीं जा सकती। प्रभु से पहले प्रभु की योगमाया जाल बिछाती चल रही है। बिना युद्ध लड़े कंस हार रहा है। चन्द चाटुकारों, सैनिकों दरबारियों और स्वजनों के अतिरिक्त उसके राज्य में उससे सहानुभूति रखने वाला कोई भी तो नहीं है।

भगवान श्रीकृष्ण एवं श्री वलराम ने नगर में प्रवेश किया है। उनकी जय-जयकार से नगर गूंज उठा है। आरती का थाल लिए दुकानदार गृहस्थ सड़कों पर उतर आये हैं। निर्भय प्रभु की आरती उतार कर धन्य-धन्य हो रहे हैं। स्त्रियां पुष्प वर्षा कर रही हैं। प्रजाजन गोप बालकों को खिला रहे हैं। उन्हें सुन्दर वस्त्र आभूषणों से सुसज्जित कर रहे हैं। कोई उन्हें जूते पहना रहा है। पुष्प मालाओं के समूह बाल मण्डली को पहनाये जा रहे हैं। गुप्तचर निरन्तर कंस को सूचना दे रहे हैं। कंस का भय और आतंक बढ़ता जा रहा है। नगरवासियों के कृत्य उसे खाये जा रहे हैं। सारा नगर श्रीकृष्ण, श्री वलराम, महाराज वसुदेव महाराज उग्रसेन के जय घोष से गूंजने लगा है। कंस को लगता है कि उसका मस्तिष्क फट जायेगा। पिंजरे में बन्द शेर की भाँति अपने महल में भटक रहा है। तड़प रहा है।

कथा संक्षेप करते हैं। पागल हाथी प्रभु द्वारा उद्धार को प्राप्त होता है। कंस के मल्ल भी कुश्ती में ही मारे जाते हैं और कंस भी कृष्ण के हाथों मृत्यु का वरण करता है। उसकी पत्नियाँ अस्ति और प्राप्ति वैधव्य को प्राप्त होती हैं। वासुदेव जेल से महाराज उग्रसेन, वसुदेव और देवकी को मुक्त कराते हैं। वे क्षण बड़े ही मार्मिक हैं। उन क्षणों का वर्णन करना वाणी द्वारा सम्भव नहीं है। महाराज उग्रसेन की इच्छा है कि वासुदेव मथुराधीश हों परन्तु वासुदेव इसे किसी प्रकार भी नहीं स्वीकारते हैं। महाराज उग्रसेन वसुदेव से वासुदेव की भीख मांगते हैं,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

जिसे वसुदेव सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। महाराज उग्रसेन पुनः मथुराधीश सुशोभित होते हैं और भगवान श्रीकृष्ण, युवराज।

प्रजाजन आनन्द विभोर नगर को दुल्हन सा सजाते हैं। मथुरा ही नहीं, सम्पूर्ण प्रदेश में प्रजाजन आनन्द-मंगल उत्सव मनाते हैं। वृन्दावन झूम उठता है। लोग दान कर रहे हैं। मिठाइयाँ बाँट रहे हैं। नूतन देवालयों, सेवाश्रमों की प्रतिष्ठा करवा रहे हैं। सड़कों पर मगन होकर नाच रहे हैं। जिस दिन भगवान कृष्ण ने कंस को मारा है उसी दिन वे पूरे दस वर्ष करके, ग्यारहवें में प्रवेश पाये हैं। उनका जन्मदिन भी वही था।

भगवान श्रीकृष्ण ऋषि सान्दीपनि के आश्रम में शिक्षा हेतु भेज दिये जाते हैं। ग्यारहवें वर्ष में प्रवेश पाते ही वालक शिक्षा हेतु गुरुकुल में प्रवेश पाते हैं। यह प्रथा अव समाप्त हो चुकी है परन्तु इसका प्रचलन अभी भी कई स्थानों पर है। सौराष्ट्र के काठी लोग जो वस्तुतः विशुद्ध रूप से यदुवंशी हैं उनमें आज भी इस प्रथा का प्रचलन है तथा रूस में भी यह प्रथा प्रचलित है अपभ्रंश रूप में। वहाँ बालक ग्यारहवें वर्ष ही स्कूल जाता है। इससे पूर्व वे जंगल में उड़ती चिड़िया की भाँति स्वतन्त्र होते हैं। ग्यारहवें वर्ष में प्रवेश पाते ही उसे माता-पिता से अलग होकर, स्कूल में रहना और पढ़ना होता है।

गुरुकुल में आते ही वालक का यज्ञोपवीत संस्कार होता था। और जैसे आप घर में वालक का यज्ञोपवीत संस्कार करते हैं, ऐसा पूर्वकाल में नहीं होता था। गुरुकुल की शिक्षा समाप्त हुए हजार से अधिक वर्ष हो चुके हैं। इसलिए आप भ्रान्तियों को सत्य मान बैठे हैं अथवा सत्य ज्ञान से सर्वथा अनभिज्ञ हैं। गुलामी की काली चादर इस संस्कृति पर हजारों वर्ष पूर्व छा गई थी। विश्वविद्यालय और धर्मग्रन्थ फूंके जाने लगे। मौत की आँधियाँ सारे भारत को दहलाने लगीं। उसका बहुत ही छोटा-स्वरूप आपने बांगला देश के उदय काल में देखा सुना है। अति न्यून! इससे भी अधिक भयावह! विद्वान; ऋषि, सन्त गाजर मूली की तरह काट दिये गए। अपनी इज्जत और जीवन को बचाने के लिए लोग जंगलों में छिपने लगे। विस्थापित होने लगे। इसी में पीढ़ियाँ गुजर गयीं। आज के कल्पना शून्य बुद्धिवादी विश्वविद्यालयों में कूलरों

की ठण्डी हवा के नीचे बैठकर कितना अनुसंधान कर पायेंगे ? उनकी
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
टूटी हुई दुरबीने भी लन्दन में बनी हैं। क्या देख पायेंगे बेचारे।

इस प्रकार गुरुकुल शिक्षा ही नहीं, बालकों को सभी प्रकार की शिक्षा ही नष्ट हो गई। कन्याओं का घर से निकलना दूभर हो गया। स्वयंवर की प्रथा ही समाप्त हो गई। क्यों ?

जिस सम्प्रदाय के गुलाम हम बना दिये गये थे, वहाँ नारी को मनुष्यता के भी अधिकार नहीं थे। पुरुष को धर्मसम्मत अधिकार था कि वह चार पत्नियाँ रखे। जिसे चाहे तीन बार 'तुम्हें त्यागता हूं' ऐसा कह कर घर से बाहर निकाल दे। विवाह के समय में जो छोटी सी एक रकम तय हो जाती थी उसी को लेकर वह सड़कों पर चल देती थी स्त्री की स्वेच्छा से पुरुष को त्यागने का अधिकार नहीं था। स्त्री का संतान तथा मकान पर अधिकार नहीं था। स्त्री को उनके धर्म ने संपत्ति माना था। पुरुष जब चाहे पूर्व पत्नियों का त्याग कर दे। उनके स्थान पर नई पत्नियाँ ले आवें। चार पत्नियों के अतिरिक्त उन्हें हरम (वेश्यालय) बनाने का भी अधिकार था। वह चाहे जितनी भी औरतों को वेश्याओं के रूप में रख सकता था। औरत को धार्मिक स्थानों में जाने और वहाँ जाकर पूजा करने का भी अधिकार न था। यह उनके धर्म एवं न्याय सम्मत अधिकार थे। आज भी यह प्रथायें भारत में प्रचलित हैं। इसके विपरीत भारतीय संस्कृति ने नारी को पुरुष से महान माना था। नारी को मनचाहा पति चुनने का अधिकार था। स्वयंवर में कन्या ही इच्छित वर का चयन करती थी।

परन्तु जब लड़कियाँ जबरन उठाई जाने लगी तो स्वयंवर प्रथा समाप्त हो गई और बाल विवाह होने लगे। बाल विवाह हम पर थोपी हुई मजबूरी थी। आप ही सोचें जब तक कन्या मानसिक रूप से परिपक्व न होगी वह अपने पति का चयन कैसे कर पावेगी ? युवावस्था में ही स्वयंवर हो सकता है, जबकि वह सयानी हो। स्वयंवर लुप्त हुए। बाल विवाह ने स्थान लिया। जीवन यज्ञ के मीत दिन को छोड़ रात्रि में मिलने लगे। शादियां दिन में हो ही नहीं सकती थीं। रात में छिपके ही सम्भव था कि कहीं कन्या जबरन उठा न ले जावें।

विवाह भारतीय संस्कृति में पवित्र यज्ञ है। नारी को बन्धुवा
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
गुलाम बनाने के लिए नहीं वरन सम्मान, सुख के लिए ही पति, पत्नी का वरण करता है। संक्षेप में एक चित्र दिखाते हैं आपको! यज्ञ के सम्मुख; विवाह की पावन वेला में; पति अपनी होने वाली वधु से वेद की ऋचाओं में जो कह रहा है उसका संक्षेप भाव :—"देवि! मैं तुम्हारा दाम्पत्य हेतु आमन्त्रण करता हूं। हम में वस्तुतः न तो कोई पति है और न ही पत्नी! क्योंकि उत्पत्ति का कारण न तो तुम जानती हो; न मैं ही जानता हूं। आत्मा और प्रकृति ही पुरुष और नारी होकर सचराचर को उत्पन्न करने की लीला करते हैं। आओ उसी सत्य रूपी लीला का पूर्वाभ्यास (रिहर्सल) करें। तुम जीव रूपी पत्नी बनो और मैं आत्मा रूपी पति बनूं। दाम्पत्य धर्म को धर्म पूर्वक, शास्त्र पूर्वक ग्रहण करें। जिस प्रकार प्रभु आत्मा होकर जीव की रक्षा, सेवा एवं सुख का भार वहन करते हैं उसी प्रकार मैं भी प्रतिज्ञा पूर्वक, तुम्हें धारण करता हूं। तुम अपना गाण्डीव (यज्ञोपवीत जिसे दुर्गा यज्ञोपवीत कहते हैं तथा जो विवाह के समय पति को पहनाया जाता है। इस प्रकार उसका यज्ञोपवीत दुहरा हो जाता है) मुझे धारण कराओ। तुम्हारी रक्षा का भार अब मुझ पर है। तुम्हारे लिए युद्ध भी मैं ही लड़ूंगा। इसलिए इस गाण्डीव को मुझे देकर तुम मेरे ऐश्वर्य (गहने, आभूषण, सम्पत्ति) को धारण कर मेरे हृदय की स्वामिनी बनो। मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मायाओं के महासमर में मैं तुम्हें अपने वाम (बाए) रखूंगा। दायें हाथ से मैं इस संसार रूपी युद्ध को लड़ूंगा, परन्तु उपलब्धि के क्षणों में पूजा, यज्ञ, मोक्ष में तुम मेरे दायें रहोगी। पहला अधिकार तुम्हारा होगा। उपरान्त तुम्हारे द्वारा ही मुझको मिलेगा।"
नारी का ऐसा सम्मान विश्व में कहीं न था। गुलामी की जकड़न ने इस महान संस्कृति को भ्रमित कर दिया। धर्म की मूल धाराओं से छूटी संस्कृति के तथाकथित ठेकेदारों ने अनुसंधान और समाज सुधार के नाम पर इसे और भी अधिक विकृत और घिनौना बना दिया जिससे समाज भटकाव और संकीर्णता को प्राप्त हो गया। काश! वे तथाकथित सुधारक सुधारवाद का नाटक न करके मूल धर्म और उसकी भावनाओं को ही स्पष्ट कर पाये होते।

यज्ञोपवीत गुरुकुल में ही होता था। जो ज्ञानार्जन हेतु जावे उसे ही
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant
यज्ञोपवीत का अधिकार था। वालक और कन्या दोनों को ही शिक्षा का अधिकार था। गुलामी में कन्याओं का बाहर निकलना बन्द हो जाने से उनका यज्ञोपवीत दुर्गा पर डाल देते थे। जिसे विवाह काल में पति को पहनाने की परम्परा आज भी प्रचलित है।

श्री भगवान वासुदेव गुरुकुल में आये हैं। उनकी भेंट श्री सुदामा, तथा गुरुकुल में सहपाठियों से होती है। सचराचर का धारण प्रकट और ज्ञान से पूर्ण करने वाले प्रभु लीलाधारी ज्ञानार्जन हेतु आए हैं। धन्य हैं सान्दीपन ऋषि! सहपाठियों के सौभाग्य की सीमा कहाँ है। पेड़-पौधों में नयी चमक आई है। प्रभु यहाँ ज्ञानार्जन हेतु उनके पास रहेंगे। लगभग वारह वर्ष का समय वालक का ज्ञानार्जन का गुरुकुल का होता था।

यज्ञोपवीत संस्कार गुरुकुल की पहली परम्परा थी इसे यह सन्यासी पिछले प्रवचन काल में स्पष्ट कर चुका है तथा इसका विस्तार 'सनातन दर्शन की पृष्ठभूमि' ग्रन्थ में विशेष है। (श्री मद्भगवद्गीता-दिव्य दर्शन' ग्रन्थ में भी इसका विस्तार है अतः इसे संक्षेप करते हैं। भक्त चाहे तो 'सनातन-संदेश' नामक ग्रन्थ में इसे विस्तारपूर्वक देख लें) यज्ञोपवीत के तीन सूत्र ही शिक्षा का मूल एवं जीवन का सार हैं। ऋग्वेद ने इनकी भावना को विस्तारपूर्वक गाया।

पहला सूत्र है जीवन के उस सूत्र को जानना, जिसके द्वारा आत्मा (ब्रह्म) घट-घट वासी होकर, भस्मी को सुन्दर फलों में लौटाता है। वनस्पति मात्र में नारायण को देखना और उनका भक्त होकर जीना। उनके लिए जीना तथा उनसे अद्वैत कर ब्रह्म के इस सूक्ष्म उत्पत्ति के ज्ञान को धारण करना। शिक्षा का उद्देश्य है। ब्रह्मचारी बालक का धर्म है नित्य नये पेड़ लगाना। निष्काम भाव से उनकी उसी प्रकार सेवा करना, जिस प्रकार पुजारी मन्दिर और मूर्ति की सेवा करता है। प्रत्येक पेड़ और पौधों को प्रभु का मन्दिर जानकर उनकी सेवा करना तथा उनसे प्रेम करना। संक्षेप में वनस्पति मात्र का सच्चा भक्त होना।

दूसरा सूत्र है प्राणीमात्र को प्रभु का मन्दिर, यज्ञशाला जानकर, एक पुजारी की भावना से, उनकी सेवा करना। प्रत्येक शरीर देवालय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

है यज्ञशाला है, वहाँ प्रभु आत्मा होकर [illegible] में यज्ञ करते हैं, सभी तो अन्न-भोजन आदि, बालक की सुन्दर देह के स्वरूप में लौटता है। प्रत्येक जीवधारी में ब्रह्म को देखना। पुजारी की भावना से निष्काम भाव से सेवा करना, उनसे प्रेम करना तथा ब्रह्म के सूक्ष्म रहस्य को धारण करना। सृष्टि के सूक्ष्म सत्य को प्राप्त होना। शिक्षा का दूसरा सूत्र था। उत्पत्ति के दूसरे सूत्र को जानना तथा प्रभु के द्वारा प्रकट हो रही सृष्टि को ईश्वरीय भावनाओं से धारण करना। सच्चे अर्थों में नारायण का भक्त होना।

तीसरा सूत्र है निज देह को आत्मा नारायण का मन्दिर जानकर एक पुजारी की भावना से निमित्त होकर जीना। अन्तर्मुखी हो जीव और आत्मा के द्वैत को योग मार्ग से अद्वैत कर, 'ब्रह्म' द्वारा-देह में हो रही उत्पत्ति का ज्ञान प्राप्त करके, आवागमन की सीमाओं को तोड़ अनन्त में व्याप्त होना। मनुष्य योनि को प्राप्त होकर भी यदि मैं इस सत्य को न जान पाया तो क्या पशु वन कर जानूंगा? मेरी शिक्षा यदि मुझे पशु और भिखमंगी अवस्था से सृजक के वहुमूल्य ज्ञान तक न पहुंचा सकी तो उसका सार्थक उद्देश्य क्या है? हर बार डिग्रियाँ बटोरी! मकान दुकान बनाये! सो गया हर वार चिता की लकड़ियों पर! जब भी लौटा--भूखा, नंगा, भिखमंगा! मेरा अर्जित ज्ञान भौतिकता सब लुट चुके थे। पुनः अक्षर ज्ञान कर रहा था! यदि मैं पहले पास हो गया था तो तुम्हीं बताओ? पुनः उन्हीं कक्षाओं में दुबारा क्यों पढ़ रहा था?

दुर्भाग्य से आज शिक्षा से यह सूत्र लुप्त हो गए हैं और शिक्षा का उद्देश्य रह गया है। वढ़िया नौकरी अच्छी तनखा और मोटी धूस! आपको मेरी कहानी कैसे समझ में आवेगी?

तीन सूत्रों के यज्ञोपवीत को गुरु कन्ठीमाला की तरह न पहना कर, धनुषाकार पहनाते थे। क्यो? दस इन्द्रियों के अर्जन से जीव मात्र ही तो अर्जुन है। शरीर (देह) ही तो उसका रथ है, और आत्मा कृष्ण ही सारथी है। सांस और धड़कन से चला रहे हैं इस देह रूपी रथ को! जिस पर यह जीव रूपी महारथी आरूढ़ है। यज्ञोपवीत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ही प्राचीन है तथा [illegible] महाभारत है। गोविन्द हरि ! (कृपया विस्तार सनातन संदेश तथा महाराज श्री के अन्य प्रवचन संग्रहों में देखें)।

भगवान श्रीकृष्ण गुरुकुल में अमृतमय ज्ञान को धारण करते हैं। प्रभु की वहाँ की लीलायें अति सुन्दर अमृतमय ज्ञान को प्रकट करने वाली तथा शिक्षाप्रद हैं। बरसात की रात में सुदामा द्वारा चनों के प्रश्न को लेकर झूठ बोलना, प्रभु द्वारा नहाते समय सुदामा को माया चरित्र दिखाना ! एक से एक विलक्षण सुन्दर तथा अमृतमय प्रसंग है। शिक्षा का स्तर, प्रकार, उद्देश्य, मान्यतायें, सिद्धान्त उनकी व्याख्यायें, सचराचर की उत्पत्ति और उनके रहस्य ! जीव और ब्रह्म का मिलन आदि ! अति दुर्लभ ज्ञान गुरुकुल में प्राप्त करके श्री भगवान मथुरा लौटकर आते हैं।

आज मथुरा दूल्हन सी सजी है। भगवान श्रीकृष्ण का राजतिलक जो है। सम्पूर्ण राज्य में हर्षोल्लास है। लोग दान कर रहे हैं। घरों को सजा रहे हैं। नाच, गाने का प्रसंग हर ओर है। अमृत बरस रहा है। श्री भगवान मथुराधीश हुए हैं। महाराज उग्रसेन वानप्रस्थ को प्राप्त हुए हैं। कितने महान थे वे लोग ! आज आप दीवारों की खातिर पिता को मार कर भगा देंगे ! आह ! महान संस्कृति के महान लोगों के आधुतिक वंशज, कहाँ चल दिये हैं ?

उद्धव, मथुराधीश भगवान श्रीकृष्ण के अन्तरंग सखा एवं सलाहकार हैं। अति विद्वान, तपस्वी एवं मननशील हैं। मथुराधीश उन्हें अति सम्मान देते हैं। श्री बलराम भी राज्य के कार्यभार में हाथ बँटाते हैं। मथुराधीश फिर भी उदास हैं, एकान्त के क्षणों में उनके नेत्र छलछला उठते हैं। यह बात उद्धव जी से छिपी नहीं रहती है। विवाह आदि में में उनकी कोई रुचि नहीं है। ब्रह्मचर्य व्रती होकर जीने की उनकी इच्छा है। बहुत बार अधीनस्थ राजाओं एवं मित्रों ने उन्हें समझाने की कोशिश की, परन्तु वासुदेव कुछ सुनना नहीं चाहते हैं। हमेशा बात टाल जाते हैं। मथुराधीश होकर भी एक योगी तपस्वी सा जीवन है उनका शिकार आदि में भी उनकी कतई रुचि नहीं है। उनके जितने भी अन्त-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

रंग मित्र हैं सभी उच्चकोटि के विद्वान एवं तपस्वी हैं। सलाहकारों में भी बाहुल्य उनका ही है। ब्रह्म-ज्ञानी, ऋषि, साधू निरन्तर मथुरा आते रहते हैं। अधिक समय वासुदेव का उन्हीं की सेवा में बीतता है। एकान्त के क्षणों में खोयी आँखों में अनायास अनजाने ही आँसुओं की लड़ियाँ प्रकट हो जाती हैं। जो उद्धव को तथा अन्य मित्रों को व्यथित कर देती हैं। उसका कारण जानने के भी उन्होंने बहुत प्रयास किये। परन्तु निरस्त करने वाली एक उदास फीकी मुस्कान वासुदेव की! उन्हें मौन कर देती है। मथुरा का सुख, वैभव आनन्द वासुदेव को छू भी नहीं पाता है। दिन में व्यस्त रहते हैं परन्तु सुबह शाम न जाने क्यों उदास हो उठते हैं। रहस्य किसी को बताते नहीं हैं। अत्यन्त संकोची हैं। एक बार एकान्त पाकर उद्धव जिद्द ठानकर उनके सामने बैठ जाते हैं।

"वासुदेव! मुझे बताओ तुम्हारी उदासी के कारण क्या हैं? मैंने तुम्हारी आंखों में बहुत बार आँसुओं की झड़ियाँ देखी हैं। कृष्ण! आज तुम्हें बताना ही होगा।"

"उद्धव! मैं क्या करूँ! बृज मुझे बिसरता ही नहीं है। वे पवित्र गोप, गोपियाँ! उन्मुक्त वातावरण! निश्छल पवित्र प्रेम! करील की कुन्जों को लिपटती, चूमती, अल्हड़ शोर करती, खनकती, हवाओं के झोंके। ढलती सांझ के साथ लौटती गायों के खुरों की संगीतमयी आवाज! उनके गले की घंटियों की गुन-गुन! उसमें अलौकिक रस घोलता पक्षियों का कलरव! कान्हा!, कान्हा!! पुकारते गोप गोपियों के समूह! विषय, वासना और छल कपट से सर्वथा अनभिज्ञ, उन्मुक्त, निश्छल, पवित्र चेहरे! उद्धव!! वे फिर-फिर मेरे सामने खड़े हो जाते हैं। मुझे देखकर हँसते हैं और दूसरे ही क्षण उदास हो उठते हैं। उनके नेत्रों से आँसुओं की धारें बहने लगती हैं। मेरे कानों में अनायास उनकी फुस-फुसाती आवाजें आने लगती हैं। कन्हैया! तू शीघ्र आने का वायदा करके गया था। अब हमें भूल गया है। हम तेरी ही प्रतीक्षा में जीवित हैं। तू न कह दे। हम तत्क्षण शरीर त्याग दें। तेरे बिना हम जी नहीं पा रहे हैं गोपाल!............"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रभु का गला अवरुद्ध हो गया है। नेत्रों से जल की धाराएं चेहरे को धोकर वस्त्रों से लुढ़कती चरण धोने लगी हैं। उद्धव स्तब्ध हैं। अनजाने में झरोखा खोल बैठे। उन्हें क्या पता था कि तूफान इतना भयंकर है।

'ऊधव वृज मोहे बिसरत नाहीं।'

"उद्धव ! जब श्रीराधा जी, गाँव में नव बधू बनकर आयीं थी तब मैं तीन वर्ष का था। श्री राधा ने मुझे असीम प्यार दिया है। मैं उसकी गोद में खेला हूं। उसके साथ मेरे अतीत के सुखद क्षण पिरोये हुए हैं। मेरे विरह मे उनका जीवन असह्य बोझ बन गया है। उस महान पवित्र तपस्विनी को मैं एक क्षण भी तो नहीं भुला पाता हूं। निष्पाप नन्द बाबा और पवित्र यशोदा माँ के श्री चरणों में मेरा मन निरन्तर भटकता है। वहाँ की माखन मिसरी का आनन्द मुझे मथुरा के पकवानों में नहीं है। वैसा निश्छल स्नेह और आत्मीय भाव मुझे यहां नहीं मिलता है।"

"वासुदेव ! आप कैसी बातें कर रहे हैं। जीवन के अमूल्य क्षणों को कोरी सांसारिकता में नष्ट करना, आपके जैसे विद्वान परम ज्ञानी परम तपस्वी को शोभा नहीं देता है।"

"कैसे कहा उद्धव ?" प्रभु ने आश्चर्य से पूछा।

"मथुराधीश ! आप वेद-वेदांतों के परम ज्ञानी हैं। महर्षि सान्दीपनि के सभी शिष्यों में आप सिरमौर हैं। अतीत की स्मृति में, फूहड़-गंवार गोपियों की खातिर दुःखी होना ! विचलित रहना ! जीवन के अमूल्य, अमृतमय क्षणों को दुःख पीड़ा में नष्ट करना, परम् ब्रह्म की भक्ति को त्याग कर, भौतिक सुखों की स्मृति में समय नष्ट करना, आपको कदापि शोभा नहीं देता।" उद्धव ने समझाते हुए कहा।

"उद्धव ! तुम्हारा कथन उचित लग रहा है कुछ और कहो।"

"कृष्ण यह संसार तो क्षण भंगुर है, स्वप्न की नाईं है। इसमें जो भी सत्य है सो निराकार अविनाशी ब्रह्म है। सम्पूर्ण गतियों को देने वाला होकर भी प्रत्येक गति में स्थिर है। सचराचर को धारण, सृजन, संहार और पुनः प्रकट करने वाला है। निराकार परम ब्रह्म ही मात्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

शक्ति है। सम्पूर्ण लोक, [illegible] उसके ही अधीन हैं। [illegible] होकर परम ब्रह्म ही घट-घट वासी होकर; जड़त्व को चेतना और जीवन प्रदान करने वाला है। परम् ब्रह्म ही अभीष्ट सिद्धियों को देने वाला है। परम् ब्रह्म ही जीवन का सार है। जीव मात्र का लक्ष्य भी वही है। परम् ब्रह्म की तपस्या, साधना और भक्ति मनुष्य मात्र का इकलौता लक्ष्य है। ऐसे परम् लक्ष्य को त्याग कर गंवार गोपियों की भक्ति करना, उनके ही ध्यान में लीन रहना कहाँ तक उचित है!" उद्धव ने कहा।

"उद्धव! तुम्हारी बातें समझ में तो आती हैं परन्तु मेरी मन स्थिति को बदल नहीं पा रही हैं। उद्धव मुझे गोपियों ने विवश कर रखा है। यदि वे मेरा ध्यान करना छोड़ दें। मेरे प्रति इन भावों का परित्याग कर दें; तभी मैं स्वस्थ होकर तुम्हारे मार्ग का अनुसरण कर सकता हूं। मुझे भी लगता ही नहीं वरन पूर्ण विश्वास है कि जो तुम कह रहे हो वही सत्य है। परन्तु क्या करूँ? जब गोपियाँ मेरे ध्यान में रोती हैं तो मेरे आंसू अनायास निकल पड़ते हैं। उनकी भक्ति भावनायें मुझे मजबूर कर देती हैं।" प्रभु ने बड़े ही भोलेपन से अपनी विवशता उद्धव के सामने सकुचाते हुए रखी।

"वासुदेव! इस समस्या का समाधान तो करना ही होगा। जीवन के अमूल्य क्षणों को इस प्रकार नष्ट नहीं किया जा सकता।"

"उद्धव। इसका समाधान तुम्हीं कर सकते हो। तुम विद्वान हो, ज्ञानी हो, तपस्वी हो! परम ब्रह्म के मर्म को जानने वाले हो। तुम जाकर गोपियों को परम् ब्रह्म की साधना का उपदेश करो। जब वे मेरा ध्यान त्याग कर परम् ब्रह्म की भक्ति में लग जावेंगी तो मैं भी स्वस्थ होकर तुम्हारे बताये मार्ग का अनुसरण करूँगा।"

"ऐसा ही होगा वासुदेव मैं आज ही प्रस्थान करूँगा।" उद्धव ने कहा।

"उद्धव मेरी एक प्रार्थना का विशेष ध्यान रखना! मैं उन गोपियों की गोद में खेला हूं। नन्द और यशोदा मेरे माता-पिता ही हैं। श्री राधा जी को मैंने सदा प्रणाम किया है। गोपियों की गोद में सोया हूं। उनके चरणों में लोटा हूं। कहीं ऐसा कुछ न कह देना कि उनको कष्ट हो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मित्र ! नन्द यशुमति को प्रणाम करना, श्री राधा जी को जयकार देना ! मैं उन सबका ऋणी हूं ! माखन मिश्री का कर्ज उतार नहीं पाया हूं।" प्रभु उद्धव को नाना प्रकार से समझाते हैं।

"ऐसा ही होगा वासुदेव।"

"उद्धव ! वे गोपियाँ बहुत संकोची हैं। पराये पुरुष से बात नहीं करती हैं। वे तुमसे भी बात नहीं करेंगी। मेरा पीताम्बर ले जाओ। उसे अपने कंधे पर रखे रहना। तभी वे तुमसे वात करेंगी।"

"ऐसा ही करूँगा वासुदेव ! तुम्हारा ऋण भी उतार दूंगा।"

उद्धव नाना वस्त्राभूषण रथ में रखकर बृज की ओर चल देते हैं। मथुराधीश उन्हें विदाई देते हैं। मथुराधीश के मना करने पर भी उद्धव ने रत्न और कीमती वस्त्र रथ में रख लिये हैं। माखन-मिसरी का कर्जा जो उतारना है उनको ! निष्पाप निर्मल उद्धव जी बृज की ओर जा रहे हैं। गोबिन्द हरि !

बृज में उद्धव आये हैं। कान्हा के परम् मित्र हैं। उनके कन्धे पर कन्हैया का पीताम्बर है। नन्द के द्वार भीड़ उमड़ पड़ी है। गोप और गोपियों के समूह नन्द का द्वार घेर कर खड़े हैं। उद्धव जी, नन्द और यशोदा जी के साथ बाहर निकल आये हैं। सबका अभिवादन करते हैं। तभी उनकी दृष्टि कृशकाय परम तेजस्विनी देवी पर पड़ती है। सूर्य जैसा दमकता हुआ तेजस्वी स्वरूप जिसे देखते ही उसके चरणों में बिछ जाने को मना करता है। उद्धव देखते ही जान गये हैं कि वे श्री राधा जी ही हैं। उद्धव अनजाने ही उनके चरणों में बिछ जाते हैं।

वे सब उद्धव जी से श्री भगवान का कुशल क्षेम पूछती हैं। उद्धव उन्हें सब कुछ बताते हैं। मथुराधीश की मनःस्थिति का परिचय देते हैं। उनकी कृष्ण भक्ति का परित्याग कर परम् ब्रह्म की उपासना का उपदेश करते हैं। तो श्री राधा जी उनसे पूछती हैं :—

"उद्धव ! परम् ब्रह्म रहते कहाँ हैं ?"

"परम ब्रह्म घट-घट वासी हैं। सभी में रहते हैं।"

"उद्धव ! क्या परम् ब्रह्म मथुराधीश की देह में भी रहते हैं।"

"हाँ ! वह मुझमें भी हैं ! तुममें भी हैं सबमें हैं।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

"क्या ? वह इन फूहड़ गँवार गोपियों में भी रहते हैं ?"

"हाँ ! परम् ब्रह्म सभी में विराजते हैं।" उद्धव ने उत्तर दिया।

"उद्धव जी ! तुमको परम् ब्रह्म की ही सौगन्ध ! सच बताओ तुमने किसी में परम् ब्रह्म देखा ? हम में फूहड़ गँवार गोपियाँ ही तो देखीं। मथुराधीश में मथुराधीश ही तो देखा ! तुमने परम् ब्रह्म को किसमें देखा ? हम मथुराधीश में परम् ब्रह्म की उपासना करती हैं हमने वासुदेव को सब में देखा है ! सब कहीं देखा है ! रे उद्धव ! यदि हम मथुराधीश की उपासक होतीं और हमारा प्यार भौतिक मिथ्यावाद होता तो तुम्हीं बताओ मथुरा से वृन्दावन पाँच मील (दो कोस) ही तो है क्या हम उनसे मिलने न जातीं ? प्रतिदिन गोपियाँ मथुरा में दही और मक्खन बेचने जाती हैं। परन्तु मथुराधीश से मिलने नहीं जातीं ! क्यों ? उन्हें घर लौटने की जल्दी है ! कन्हैया राह देखता होगा ! उद्धव ! क्या यह परम् ब्रह्म की उपासना नहीं है। उद्धव ! तुझे परम् ब्रह्म की सौगन्ध ! बता हमको ! परम् ब्रह्म की कभी तूने भावना करके आचरण और व्यवहार भी किया है। किसमें देखा परम् ब्रह्म तूने ?"

निष्पाप उद्धव स्तब्ध हैं। अन्तर्मन भीषण तूफान के थपेड़ों में दहलाया हुआ है। "रे उद्धव ! तूने परम् ब्रह्म देखा किसमें है। कितना नग्न सत्य ! तू उसे जान न पाया ! रे ऊधो ! रे ऊधो !!" उद्धव विचारों के झंझावत में स्वयं से झूलने लगा है। "आह कभी सत्य का आभास तक न हुआ। यदि मैंने परम् ब्रह्म को घट-घट वासी माना तो देखा क्यों नहीं ? सबमें सब देखा ! एक परम् ब्रह्म ही तो नहीं देखा ! क्या परम् ब्रह्म में मेरी आस्था थी ? उद्धव उत्तर दे स्वयं को ? ज्ञान के भण्डारी ! दुनिया को ब्रह्म के रहस्य बताने वाले ! तूने जगती को ब्रह्ममय जानकर कब आचरण और व्यवहार किया ? राधे ! राधे !! तू कौन है ? सत्य का इतना स्पष्ट साक्षात्कार तो मुझे देव भी न करा पाये ! हे देवि ! तेरे श्री चरणों में कोटि कोटि प्रणाम है। ज्ञानांध मानता फिरा कि मैं परम् ब्रह्म का उपासक हूँ कन्दराओं की लम्बी समाधियों में; घने वनों में; मौन चिन्तन के क्षणों में भी तो रे ऊधो ! अपनी वस्तु स्थिति को भाँप न पाया था। एक क्षण में सत्य सम्मुख खड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

करने वाली । हे देवि ! तू कौन है ? रे ऊधो ! तूने यदि परम् ब्रह्म को घट-घटवासी माना था तो सबमें वही है ऐसा मानकर आचरण क्यों नहीं किया ?" उद्धव जी मौन स्तब्ध हैं । उनके नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित है 'कितना बड़ा धोखा मैं स्वयं को दे रहा था ! हे तेजस्विनी देवी तेरा साक्षात्कार ही आज उस भ्रम जाल को तोड़ सका । आज जीवन में पहली बार मैं तुझमें, वासुदेव में, सबमें परब्रह्म को देख पा रहा हूँ ! तेरे चरणों में बारम्बार प्रणाम है ।" उद्धव जी के नेत्र मुन्दे हुए हैं । भीत के सहारे बैठे हैं । विचारों के भीषण तूफान उसके मस्तिष्क हृदय और सम्पूर्ण ज्ञान को मथे जा रहे हैं । नेत्रों से अश्रुजल धारा निरन्तर प्रवाहित है !

नन्द जी कहते हैं उद्धव मैं परमब्रह्म तो जानता नहीं । अभी देखा था कन्हैया गौओं की सेवा में लगा हुआ था । मैंने कहा "लाला थक गये होंगे, थोड़ा आराम कर लो ।" माना नहीं दूसरी गाय के पास जाकर सहलाने लगा । "यशोदा जी कहती हैं, "उद्धव जी हर क्षण आंखों के सामने रहता है मेरा तो वही परब्रह्म है । अभी गोद में बिठाकर माखन मिसरी खिलाकर आ रही हूँ । चल के देख ले पालने में सो रहा है ।" गोपियां कहती हैं उन्हें पेड़ों पर बैठा बांसुरी बजाता मिलता है । गायों के पीछे भागता हुआ दिखाई पड़ता है । रात्रि की नीरवता को चीरती उसकी बांसुरी की मधुर तान सुनाई देती है । एक गोपी कहती है कि वह जब आ रही थी तो उसने देखा कि लाला पेड़ पर बैठा बांसुरी बजा रहा है वह उसको पकड़ने के लिए दौड़ी । लाला लोप हो गया । कहीं छिप गया । पेड़ का तना ही बेचारी की बाँहों में आया । तब वह बहुत रोई । बहुत रोई !

उद्धव ! यह कैसी लीला है । नन्द उसे गायों की सेवा में देखता है । वही नन्द प्रतिमाह कर चुकाने मथुरा जाता है । भण्डारी को ही सामान देकर लौट जाता है । वासुदेव से मिलने का प्रयास भी नहीं करता ? उद्धव को लगता है यहाँ की माटी के हर कण में कृष्ण रूप में परब्रह्म प्रकट होकर मुस्करा रहा है । श्री राधा जी कह रही हैं :—"उद्धव जी ! जिस परब्रह्म को आप सिद्ध करना चाहते हैं आप उसमें ही सिद्ध (व्याप्त) क्यों नहीं हो जाते हैं ।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

क्या बात कही राधे तुमने ! उद्धव भीतर बाहर झंकृत हो गया है। उसे लगता है वह किसी दूसरे ज्योतिर्मय धरातल पर उतर आया है। चारों ओर चकाचौंध करने वाला प्रकाश है। उद्धव को अपनी देह से भी प्रकाश की दिव्य किरणें प्रस्फुटित होती देखती हैं। उन्हीं किरणों के ज्योतिर्मय समूहों में उद्धव स्वयं से कह रहा है, 'इस ज्योति को सिद्ध क्यों करना चाहता है उद्धव ? कहां रखेगा इसे ! तू स्वयं भी तो क्षण-भंगुर है। ज्योति नित्य है। क्यों नहीं अपने स्वरूप को ज्योति में ही व्याप्त कर अनन्त हो जाता !" राधा ! राधा !! क्या कहा था तुमने ? जिस पर ब्रह्म को सिद्ध करना चाहते हो उसमें स्वयं को ही क्यों नहीं सिद्ध (व्याप्त) कर देते ? राधे ! तुम्हारी जय हो। इन समस्त गोपियों में, मैं आज तुम्हारी और कृष्ण की युगल जोड़ी को ही देखता हूं।"

उद्धव जी की विचित्र अवस्था है। उद्धव आज, उद्धव को ही नहीं खोज पा रहा है। उद्धव सोचता है; उद्धव कहीं खो गया है। उद्धव गोपियों के चरणों में लोट-लोट जाता है। भोली गोपियाँ डरी, सहमी, राधा जी की ओर देखती हैं। मानों पूछ रही हों इन्हें क्या हो गया है ? अभी तो भले चंगे थे।

राधा जी की निगाहें रथ पर रखे वस्त्राभूषण पर पड़ती हैं, तो वे चौंक उठती हैं।

"उद्धव ! यह वस्त्र और कीमती आभूषण तुम क्यों लाये हो ?"

उद्धव मौन हैं। अपराधी की भाँति सिर झुका लेते हैं। राधा जी पुनः कह रही हैं :—

"उद्धव ! मथुराधीश की हिम्मत नहीं जो हमको गहने और वस्त्र भेजें ! उद्धव ! अवश्य तुम अपने मन से लाये हो। यह कांच के टुकड़े हमारे माखनमिसिरी का ऋण नहीं उतार सकते। वासुदेव से कह देना, सहस्त्र युगों में भी तुम हमारा कर्जा उतार न पाओगे। सदा हमारे ही कर्जदार रहोगे।" फिर वे गोपियों की ओर पलटती हैं, "सखियों ! रथ में माखन मिसरी लाकर भर दो। उद्धव उनसे कहना नया ऋण और दिया है।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उद्धव अपराधी से सिर नवाये हैं। कुछ कहने की उनमें हिम्मत ही नहीं है। गोविन्द हरि !

कथा का समापन करते हैं। उद्धव जी लौटकर मथुरा आते हैं। वासुदेव उनसे वृज का कुशल क्षेम पूछते हैं तो उद्धव के नेत्रों में अश्रु-जल धारा प्रवाहित हो उठती है। कृष्ण कहते हैं, उद्धव तू तो उन्हें सुधारने गया था। लगता है तुझे भी यह बीमारी लग गयी है। उद्धव भगवान के चरणों में लिपट जाते हैं। वासुदेव ! मेरे अपराध क्षमा करो। मैंने आपको पहचाना नहीं ! भगवान भोलेपन से पूछते हैं, "कैसे अपराध उद्धव ?" कथा तो बहुत लम्बी है ! फिर सुनायेंगे कभी ! तभी सुनायेंगे जब आप प्यास जगाकर आयेंगे ! छिद्रान्वेषी, पूर्वाग्रहों से ग्रसित अभागे जन कथा के मर्म को कभी प्राप्त नहीं हो सकते। वे दया एवं सहानुभूति के पात्र हैं।

कंस की हत्या के उपरान्त उसकी दोनों पत्नियाँ अस्ति और प्राप्ति अपने पिता जरासन्ध के यहाँ चली गयीं। जरासन्ध जब भी अपनी पुत्रियों के वैधव्य स्वरूप को देखता तो उसका मन प्रतिशोध की ज्वाला से धधक उठता। उसने सुना कृष्ण मथुराधीश हुये हैं तो उसने मथुरा पर आक्रमण कर दिया। श्रीकृष्ण और श्री बलराम के नेतृत्व में यादव सेना जम कर लड़ी और जरासन्ध को निराश वापस लौटना पड़ा। एक के बाद एक, शक्तिशाली भयंकर आक्रमण जरासन्ध ने किये परन्तु मथुरा को जीत न पाया। उसके सत्तरह बार के आक्रमण विफल हुये। अठारहवीं बार अपने मित्र कालयवन को लेकर उसने मथुरा पर आक्रमण करने की ठानी। एक ओर से कालयवन और दूसरी ओर से भारी सेना लेकर जरासन्ध चल दिया। दोनों ओर से व्यूहाकार चतुरंगिणी सेनाओं के बढ़ते सागर की सूचना निरन्तर मथुराधीश को मिल रही थी। मथुरा जैसे छोटे स्थान पर युद्ध लड़ना सम्भव नहीं था। इससे पूर्व ही, सागर किनारे, सौराष्ट्र में, वासुदेव ने नये राज्य की स्थापना का कार्य भी शुरू कर दिया था। असुर लुटेरों से निरीह लोगों की रक्षा हेतु ही द्वारिकाओं का निर्माण किया गया था। यह द्वारिकायें पूरे सौराष्ट्र प्रदेश में फैली हुई थीं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

दोनों सेनाओं से एक साथ लड़ना सम्भव नहीं है। श्रीकृष्ण ने युद्ध की नई व्यूह रचना तत्क्षण सोच ली। उन्होंने; जो प्रजाजन द्वारिका बसना चाहते थे, उन्हें द्वारिका भेजने की व्यवस्था करवा दी तथा आक्रमण से पूर्व ही मथुरा को खाली करने का आदेश जारी कर दिया। जिससे असुर सेनायें निरीह जनता को न मारे तथा गुलाम न बनावें। श्री बलराम एवं श्रीकृष्ण कालयवन से युद्ध के लिए मथुरा छोड़कर चल दिये। जिस ओर से कालयवन की सेनायें आगे बढ़ रही थीं उसी ओर यादव सेनायें आगे बढ़ने लगी। मार्ग में ही दोनों सेनाओं में भीषण युद्ध छिड़ गया। इसकी आशंका कालयवन को नहीं थी। उसकी सेनायें लड़ने के लिए तैयार भी नहीं थी। उसके सैनिक गाजर मूली की तरह कटने लगे। श्रीकृष्ण ने लीला की! मुचुकुन्द ऋषि के हाथों कालयवन मारा गया।

उधर वीरान मथुरा में जरासन्ध की सेनायें भटक रहीं थीं। जब उन्हें पता चला कि कृष्ण और बलराम ने मार्ग में ही कालयवन पर भयंकर आक्रमण कर दिया है तथा वह बुरी तरह घिर गया है जरासन्ध शीघ्रता से सेना लेकर उसको मदद को आगे बढ़ा। मथुरा को जलाकर भस्म करने की उसकी इच्छा भी पूरी न हो सकी। जरासन्ध की सेनाओं के पहुंचने से पूर्व ही यादव सेनायें, द्वारिका की ओर कूच कर चुकी थीं। उसने बहुत दूर तक पीछा किया। परन्तु श्रीकृष्ण और बलराम प्रवर्षण पर्वत पार करके जा चुके थे। राह के जंगलों में भयंकर आग लगी हुयी थी। जरासन्ध हाथ मलता लौट गया। प्रभु द्वारिकाधीश सुशोभित हुए।

सुर और असुर की चर्चा हम प्रवचन में निरन्तर सुनते आये हैं। श्रीकृष्ण सुर नायक हैं। जरासन्ध, कालयवन और दन्तवक्र असुर राज है। दोनों ही भक्त हैं। भगवान की पूजा करने वाले हैं। दोनों ही ईश्वर से वरद होते हैं। दोनों में भेद क्या है?

एक ही प्रभु के उपासक, दो क्यों हो गये। इसका कारण उनकी ईश्वर भक्ति नहीं, वरन् जीवन के मूल उद्देश्यों को लेकर हुआ। दोनों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मित्र भी थे। स्वजन भी थे, श्वसुर दामाद भी थे। एक घर में भी रहे। मतभेद विचारों का था, मान्यताओं का था।

असुर ने कहा, "परम पिता परमेश्वर ने पुरुष को आनन्द भोग हेतु भेजा है। धरती पर उसने जो कुछ भी बनाया है पुरुष की भोगेच्छा हेतु ही बनाया है। स्त्री भोग्या है। श्रीमान् पुरुष जो असुर विचारों के उपासक हैं वे ही परम पिता परमेश्वर के प्रिय पुत्र हैं। उन्हें संसार को मनचाहा भोगने का पूर्ण अधिकार है। नारी भी अन्य सम्पत्ति के समान है। पुरुष की भोग्या है। पुरुष जिस प्रकार चाहे उसका भोग करे। माँ, बहन और पत्नी होकर भी उसका अधिकार पुरुष के बराबर कदापि नहीं हो सकता। वह तो मिट्टी के खेत के समान है। पुरुष जो चाहे बोये, जैसे चाहे जोते। नारी पुरुष की सम्पत्ति है। वह उसे बेच सकता है, दान कर सकता है। परमेश्वर ने पुरुष के खाने के लिए ही पशु, पक्षी, पेड़ पोधे बनाये हैं। उनको मारकर खाने हेतु उनको बनाया गया है। मांस, मदिरा का सेवन धर्मसम्मत है।

यह (संक्षेप में) विचार थे असुर के। उनके सन्त और सन्यासी पानी के घड़ों को छूते थे तो वह पवित्र शराब हो जाती थी। जल की नदी की ओर देखते थे तो उनके तपोबल से सारी नदी पवित्र शराब बन जाती थी और उनके उपासक उसे भक्ति पूर्वक पीते थे। दूसरों को लूटना, गुलाम बनाकर बेचना, औरतों को वेश्या बनाकर बेचना तथा वेश्यालयों को बनाना, उनका धर्मसम्मत अधिकार था। निरीह, असहाय दीन स्त्री पुरुषों को बलपूर्वक पकड़वाकर, उनसे बड़े भवन बनवाना। विषय भोग हेतु बालकों एवं कन्याओं को सताना, कुकर्म करना, सब कुछ उनके धर्म का अंग था। उनको बेचकर धन एकत्र करना, कोई बुरा काम नहीं था।

यहाँ इसको भी स्पष्ट कर लेना चाहिये कि सुर और असुर विचारधारा आज से छह हजार वर्ष पूर्व थी तथा लगभग इसी समय में पृथ्वी के भयंकर उल्कापात में नष्ट हो जाने से दोनों ही संस्कृतियाँ नष्टप्राय हो गयी थीं। वर्तमान दो हजार वर्षों में प्रकट हुए सम्प्रदायों से इसका सम्बन्ध नहीं है। एक ही पिता के दो पुत्र सुर और असुर बने। वे सगे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भाई भी थे। आज उस स्मृति के अवशेष के रूप में 'अवेस्ता' और 'वेद' हैं। वर्तमान धर्मों और सम्प्रदायों में इन विचार धाराओं की छाप ही देखने को मिलती है। कोई सम्प्रदाय एक विचार से प्रभावित है तो दूसरा किसी दूसरे विचार से !

सुर ने कहा ये सब महा पाप है। पुरुष ईश्वर ही की ही भाँति प्राणीमात्र की सेवा के लिए यहाँ भेजा गया है प्रभु ने जो सचराचर रूपा वगिया बनाई है पुरुष उसका माली है। प्राणीमात्र की निष्काम सेवा, जब प्रभु स्वयं आत्मा होकर, घट-घट वासी होकर कर रहे हैं ! तो पुरुष का धर्म ईश्वर ही की भाँति प्राणीमात्र की निष्काम सेवा करना है। भक्त, भगवान से भी महान है। उसी प्रकार नारी का स्थान पुरुष से ऊपर है। अधिक विस्तार नहीं कर रहे हैं। समय बहुत ही कम रह गया है तथा सुर विचारधारा ही नारायण की लीला है।

अब एक बात बताओ ? तुम्हारा एक ही कमरे का मकान हो, तुम तुम उसमें बैठकर व्यभिचार करना चाहो तो अपने माता-पिता को पहले वहाँ से हटाना होगा न ! उनके सामने तो संभोग नहीं कर सकते ! इसीलिए असुर ने कहा कि परम पिता परमेश्वर मेरे शरीर में नहीं हैं। 'अ'+'सुर'। अर्थात मैं 'सुर' (देवता, ईश्वर) से रहित ('अ') हूं। देव मेरी देह से परे हैं, अन्यत्र कहीं है। मेरा शरीर रूपी घर, मेरे अभिभावक से खाली है। मैं आजाद हूं।

सुर ने कहा कि सुर (देवता, ईश्वर) मुझमें है। मैं उनसे दूर नहीं हूं। उससे संयुक्त हूं। उसी में व्याप्त हूं। उससे हटकर मेरे जीवन का कोई क्षण नहीं है। इस प्रकार वह 'सुर' कहलाया। दूसरा 'असुर' कहलाया।

असुर ने नारी को भोग्या, गुलामी सम्पत्ति और वेश्यावृत्ति दी। सुर ने उसे पुरुष के ऊपर अधिकार देकर नवदुर्गा के रूप में उसकी पूजा करवाई।

कृष्ण सुर नायक हैं। वृत्रासुर, भौमासुर, वाणासुर आदि असुर राज है। निरन्तर युद्ध में पुरुषों की कमी के कारण नारी के साथ अन्याय न हो, इसीलिए सुर उपासकों को मजबूर होकर बहु पत्नी प्रथा की शरण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

लेनी पड़ी। उसमें भी स्वयंवर का अधिकार नारी को ही दिया गया। इसका दूसरा कारण यह भी था कि निराश्रित कन्याओं को पकड़कर असुर बेच देते थे। इसीलिए सुर विचारधारा ने नारी को, पूर्ण संरक्षण प्रदान करने के किये, उनकी रक्षा हेतु तथा वे सन्तति को भी प्राप्त हों। सन्तान का अभाव नारी के लिए कितना पीड़ादायक होता है, यह तो सर्वविदित है। मात्र इन्हीं कारणों से बहुपत्नी प्रथा थी। उस काल की मजबूरी थी। अकेले भौमासुर के यहां से श्रीकृष्ण ने चौसठ हजार बन्दी कन्याओं को छुड़ाया था।

द्वारिकाओं का संक्षेप रहस्य बताते हैं आपको। सम्पूर्ण सोराष्ट्र प्रांत में, सागर के किनारे द्वारिकायें बनाई गई थीं। जहां यादव सरदार सागर पर निगाहें गड़ाये चौकस रहते थे, असुर जहाजी बेड़े निरीह बालकों कन्याओं को बन्दी बनाकर बेचने हेतु आगे बढ़ते। द्वारिका से द्वारिका तक घोड़ों पर सूचनायें दौड़ने लगतीं। धीरे-धीरे असुर बेड़ों को यादव सरदार अपने बेड़ों से चहुं ओर से घेरते चलते और फिर सागर में घेर कर असुरों को परास्त कर, उन बन्दियों को छुड़ाते। वासुदेव उन्हें गीता का ज्ञान देते। जीने के सहारे देते। समाज में उन्हें सम्मानित कराते थे। क्या? मेरे प्रभु दीन-बन्धु, अनाथों के नाथ! ईश्वर से कहीं कम थे? बोलो!

अब 'सुर' और 'असुर' दोनों ही संस्कृतियां विनाशप्राय हो चुकी हैं। उनका स्थान नूतन धर्मों, सम्प्रदाय ने लिया है। पूर्व काल में विचारों में संकीर्णता नहीं थी। उग्रसेन 'सुर' थे तो 'कंस' जरासन्ध के प्रभाव में आकर असुर हो गया। भेद विचारों का था। असुर स्वयं को असुर कह कर गर्व का अनुभव करता था। असुरवाद सदा सुरवाद से बढ़ा चढ़ा रहा। कारण?

कोई आपसे कहे कि आप सबके दास और नौकर बनकर जिये। सबकी सेवा करें आपको यह बात कम पसन्द आवेगी। इसी स्थान पर कोई आपसे कहे, सब कुछ आपकी ही सेवा के लिए है। सब आपके दास हैं। जैसा चाहिये नचाइये; जैसे चाहें भोगें। आपको यह बात बहुत पसन्द आवेगी। इसीलिये सुर विचारधारा ने सदा मार खाई। असुर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

शक्ति सम्पन्न रहे। 'सुर' सदा भागते फिरे। प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्र था चाहे जिस विचारधारा को स्वीकारे। परिवार, कुल जात-पाँत की रुकावट तब नहीं थी। मनुष्य तब इतना संकीर्ण नहीं था।

कुछ वर्ष पूर्व की घटना है। यह सन्यासी कहीं अन्यत्र गाड़ी द्वारा जा रहा था। रास्ते में देखा, एक सम्प्रदाय का बहुत ही सुन्दर विद्यालय बन रहा है। सन्यासी ने गाड़ी रुकवा दी। उतर कर विद्यालय देखने लगा। तभी उस सम्प्रदाय के गुरु बाहर निकले। इस सन्यासी को देख कर चौंके। सन्यासी ने उनका अभिवादन किया और स्कूल की तारीफ की। सम्प्रदाय के गुरु ने प्रश्न किया--"आपको यह सब देखकर जलन नहीं होती? हम लोग तो आपके विपरीत हैं? "इस सन्यासी ने उत्तर दिया "धर्मगुरु! एक मूर्खता के अतिरिक्त बाकी सब काम तो हम अच्छा कर रहे हैं। मनुष्यता को सम्प्रदायों की संकीर्ण डिब्बियों को बन्द करने के अलावा, बाकी सब काम तो एक सा ही कर रहे हैं और अच्छा कर रहे हैं। हम सबको अच्छे नागरिक बनने का ज्ञान दे रहे हैं। उनमें अच्छाइयाँ भर रहे हैं। हम सब उन्हें यह भी पढ़ा रहे हैं कि ईश्वर एक है जिसने सबको बनाया। है न!

जिस दिन यह मूर्ख लोग इस बात को मान गये कि इसका बनाने वाला जब एक है तो यह दो क्यों हैं? तो धर्मगुरु! यह सब एक हो जायेंगे! तुम भी भागोगे। मैं भी भागूंगा! तुम चाय बनाओगे, मैं टिक्कड़ सेकूंगा और हम मिलकर खायेंगे।

काश! हमारे राष्ट्रीय नेता और विचारक साम्प्रदायिक संकीर्णताओं के लिये मानवीय मूल्यों की अवहेलना न करते! मानवता को बलि का बकरा न बनाते। कथा आगे बढ़ाते हैं।

वासुदेव की द्वारिकाओं का आतंक असुर राजाओं के लिए असह्य हो उठा। भीमासुर बन्दी कन्याओं को इसी डर से बेच नहीं पाया था; कि राह में कृष्ण लुटेरा जो बैठा है। मूल द्वारिका तीन नदियों के किनारे बसी हुई थी। उनके नाम थे 'देविका', हिरण्या' और सरस्वती' देविका के किनारे समाधिस्थ कृष्ण को बाण लगा था। उसकी लीला ही सारे रहस्यों को स्पष्ट करने वाली है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सौराष्ट्र के काठी वस्तुतः मूल यादव हैं। जो श्री भगवान के साथ द्वारिकाओं में आकर वसे थे तथा जिनके शौर्य और बल से वासुदेव भारत की अवोध कन्याओं एवं निरपराध वन्दियों को असुरों के चंगुल से वचा सके।

द्वारिकाओं की कथा के साथ भास्कर भाई का नाम जुड़ा हुआ है उन्होंने कहा चलिये आपको द्वारिका ले चलें, और चल दिये हम! भास्कर भाई धन्य हैं।

द्वारिकायें! भेंट द्वारिका, द्वारिका से सागर के किनारे भावनगर तक फैली हुई थीं। एक वार फिर अपने साथियों के साथ घूम रहे थे हम लोग! अतीत के आवरण फटते जा रहे थे! प्यारे! काठी चेहरे! आज भी उन्हीं वस्त्रों में! उन्हीं भावों में घूम रहे थे। लगता था जैसे समय ने कुछ भी तो नहीं वदला है। गोपियों की भांति सजी काठी नारियां, गोपों से सजे काठी। आज भी उतने ही सरल, सहज और पवित्र हैं। आज भी वे माई बापा (गाय और बैल) का घर वनाते हैं उसी में 'माई' 'वापा' के चरणों में रहते हैं। वाँसुरी लिए दूर तक गायों को चराने जाते हैं। मस्त उन्मुक्त, नर-नारी नाचते हैं। उनके चरित्र की पवित्रता वहीं जाकर देखी जा सकती है। नारी अकेले चाहे जहाँ जा सकती है कोई पर पुरुष उसकी ओर कुदृष्टि नहीं डाल सकता। यदि उसने ऐसा किया तो निश्चित रूप से मृत्यु का वरण करेगा। उसका हत्यारा स्वयं अदालत के सामने खड़ा होकर अपने अपराध को स्वीकारेगा। झूठ नहीं बोलेगा वह। वकील का क्या काम?

'माई' 'बापा' को डण्डा मारना तो दूर कोई गाली भी नहीं दे सकता! उनके माई (गाय), वापा (बैल) दर्शनीय हैं। ऐसे स्वस्थ पशु आपको सारे भारत में नहीं मिलेंगे। पति पत्नी अपने छोटे वच्चों को 'माई' 'वापा' को सौंपकर स्वयं खेत पर काम करने चले जाते हैं। उस दृश्य की कल्पना ही अति मधुर है। चारपाई पर छोटा सा शिशु सोया हुआ है। उसके एक ओर माई (गाय) बैठी है दूसरी ओर बापा (बैल)! दोनों पागुर कर रहे हैं। यदि बालक चारपाई से गिरने को होता है तो थूथन से फिर चारपाई के मध्य में ढकेल देते हैं। वासुदेव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

की लीला के छह हजार वर्ष वाद । कृष्ण ने गाय दी, बलराम ने हल । काठी आज भी उन्हीं के सहारे जिन्दा है।

वालक ग्यारह वर्ष का हुआ नहीं कि गुरुकुल में भेज दिया जाता है। आज भी शिक्षा का स्वरूप उतना पुराना ही है। एक क्षण भी तो समय के अन्तराल छू नहीं जाते हैं। पता नहीं समय सारे दृश्यों को किसके लिए ज्यों का त्यों सजाये हैं। कुछ भी तो बदला नहीं है। किसका इन्तजार है ?

वेरावल और पोरबन्दर पर आने पर बहुत कुछ बदलाव और पुरानापन लिए स्वागत करता मिला।

देविका के किनारे पहुंच कर जीवन का सबसे बड़ा आश्चर्य हुआ ! थोड़ी देर तक तो विश्वास ही न हुआ। एक पेड़ ! उतना ही झुका हुआ ! देविका उतनी ही मौन ! स्तब्ध ! घाट भी वैसा ही ! पेड़ सौ वर्ष से अधिक पुराना नहीं। घटनाक्रम छह हजार वर्ष पुराना है ! प्रकृति क्यों उस दृश्य को आज भी वैसा ही सजाये हैं। यहीं पर तो वेदव्यास का सुर नायक वाण खाकर सो गया था। यहीं आकर ही वेदव्यास ने अपनी अन्तिम लीला का समापन किया था। एक नायक इतिहास का ! दूसरा नायक घट-घट वासी अध्यात्म का ! दोनों एक होकर कथा में चलें ! एक ही स्थान पर एक साथ वाण लीला पर समापन को प्राप्त हुये फिर सम्पूर्ण महाभारत और भागवत के रहस्य खुले ! संक्षेप में सुनाते हैं बाण-लीला !

तीन नदियों के किनारे बसी द्वारिका ! 'देविका' 'हिरण्या' और 'सरस्वती'। द्वारिका के दोनों ओर सागर के किनारे दूर-दूर तक फैली द्वारिकायें ? जीवन के अमृत से परिपूर्ण ! बैभव, सुख ज्ञान को प्राप्त। इन सबसे दूर ! देविका के किनारे झुके हुए वृक्ष से पीठ लगाये निद्रा निमग्न एक समाधिस्थ सन्यासी ! स्वयं वासुदेव ! गुरुकुल से गृहस्थ फिर वानप्रस्थ और अब सन्यास। जीवन को प्रकृति और पुरुष की लीलाओं के अनुरूप जीने की प्रेरणा के प्रतीक ! वासुदेव सन्यास ग्रहण कर तपस्या में लीन हैं। उचित समय पर यथा आश्रम को धारण करना मनुष्य मात्र का धर्म है। प्रभु ! समाधिस्थ हैं। तभी एक ओर से एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

बहेलिया प्रकट होता है ! वाण तरकस से निकालता है। कमान पर वाण आता है वाण सीधा समाधिस्थ योगी के चरणों में लगता है। बहेलिया अपनी भूल पर पश्चाताप करता है।

"हा नाथ ! मैं अधम यह क्या कर बैठा ? हरिण के धोखे में प्रभु आपको आहत कर दिया ?" बहेलिया फफक कर रो उठता है।

"दुखी मत हो" श्री प्रभु की समाधिस्थ थिर गम्भीर वाणी गूंज उठी, "आज तुझे प्रथम बार सत्य का अवलोकन हुआ है। प्रत्येक बार जो बाण तूने हरिण को मारा था वह बाण लगा तो मेरे सीने में ही था। आत्मा होकर मैं ही तो वाण खाता रहा तुझसे ! प्राणी मात्र में मैं ही हूं। निरीह पशु-पक्षियों का मैं ही आत्मा होकर धारक, रक्षक, संचालक हूं। तुझमें भी मैं हूं ! हर बाण मेरे ही सीने में लगता है ! जाओ प्राणी मात्र से प्यार करो ! किसी को सताओ मत ! जीव मात्र के प्रति दया आदर एवं प्रेम का भाव लाओ ! प्राणी मात्र में मैं ही हूं जो ऐसा जानकर प्राणी मात्र की सेवा, प्यार एवं पूजा करता है वही मनुष्य मेरा सच्चा भक्त है ! मुझको जानने एवं भजने वाला है। वही मुझको प्राप्त होता है।

आहत सन्यासी उसे क्षमाकर पुनः समाधिस्थ हो जाता है। विष अपना प्रभाव दिखाता है। पार्थिव देह देविका नदी की गोद में लुढ़क कर गिर जाती है। एक दिव्य ज्योति पुंज इससे पूर्व ही देह को त्याग कर गगन में लीन हो जाता है।

देविका की लहरों में उछाल आता है। नदी देवी का रूप धारण कर, करुण क्रन्दन करती प्रकट हो जाती है। साथ में वह रही दूसरी नदी हिरण्या और सरस्वती को पुकारती है। दोनों नदियाँ भी देवियों के रूप में प्रकट हो जाती हैं। नाटक चल रहा है।

देविका :—हिरण्या ! सरस्वती !! आज धरती पर जघन्य अपराध हुआ है।

हिरण्या :—देविका ! क्या हुआ है ? क्यों दुखी हो।

सरस्वती :—तुम्हारे करुण क्रन्दन का कारण क्या है ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

देविका :—समाधिस्थ तपस्वी सन्यासी समाधि अवस्था में बाण द्वारा आहत हुआ है। उसका पार्थिव मेरी गोद में तैर रहा है।

हिरण्या :—समाधिस्थ सन्यासी के लिए तो मन में भी अपवित्र विचार नहीं ला सकते ! उनका अपमान करने वाला महाविनाश को प्राप्त होता है। उनको आहत करने वाला कौन है ? कौन है वे सन्यासी ?

देविका :—सन्यासी, स्वयं वासुदेव हैं।

सरस्वती :—नहीं ! हिरण्या ?

देविका :—हाँ ! सरस्वती ! वासुदेव ! उनका स्वरूप देखो। मौन चिर निद्रा निमग्न ! मैं सहन नहीं कर पा रही हूं। आज धरती को श्राप दूंगी। जिस धरती पर तपस्वी आहत होंगे। वह मुझसे अभि-शप्त होगी। देह तो दूंगी। देवत्व न होगा।

हिरण्या :—जहाँ पर सन्यासी और तपस्वी आहत होंगे। वहाँ धरती मुझसे अभिसप्त होगी ! तपस्वी तो दूंगी ! तप न होगा !

सरस्वती :—आज धरा मुझसे भी अभिशप्त होगी। ग्रन्थ तो दूंगी ! ज्ञान न होगा।

तीनों देवियों ने जब धरा को अभिशप्त कर दिया तो भगवान श्री महाविष्णु शंख, चक्र, गदा, पद्म सुशोभित प्रकट हो गये। तीनों देवियों ने उन्हें प्रणाम किया। उनकी स्तुति की। महाविष्णु ने तीनों को सम्बोधित किया। देविका ! हिरण्या ! सरस्वती !! आज तुमने धरा को क्यों अभिशप्त कर दिया ? क्या तुम नहीं जानती थी कि बहेलिया और कोई नहीं स्वयं धर्मराज था।

जब धरा मोहवश मुझे छोड़ नहीं रही थी। देवलोक में देवताओं ने धर्मराज से कहा कि तुम्हीं जाकर नारायण को लौटाकर लाओ। तब धर्मराज ने कहा कि नारायण को पाश में बांधकर लाने की सामर्थ्य उसमें नहीं है। देवताओं द्वारा समझाये जाने पर उसने बाण द्वारा मुझे प्रणाम करके सचेत किया कि नारायण लौटने के क्षण हैं।

देविका ! तुम्हीं तो देवकी हो जो माँ बनकर मुझे तन देती हो ! हिरण्या ! तुम्हीं तो यशोदा हो जो तन का शृंगार देती हो। सरस्वती ! तुम्हीं तो राधा हो जिसके साथ मैं ज्ञानलीला करता हूं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

तुमने जानते हुए भी कि यह मात्र लीला थी। धरती को अभिशप्त क्यों किया ?

तीनों देवियों ने पुनः प्रणाम कर, उत्तर में प्रश्न किया--

"नारायण ! जब धर्मराज ने आपके श्री चरणों में वाण द्वारा प्रणाम किया तब आप कौन सी लीला कर रहे थे।"

महाविष्णु :--समाधिस्थ सन्यासी की।

देवियाँ :--हमने भी लीला में ही श्राप दिया ! जब भी समाधिस्थ, योगी, तपस्वी, सन्यासी आहत होंगे। "धरा अभिशप्त होगी !"

महाविष्णु :--"परन्तु ! अभिशप्त धरा कहाँ हुई ? अभिशप्त तो मैं ही हो गया ?"

तीनों देवियाँ :--'नारायण ! इसीलिए तो श्राप दिया ! आप हम अनाथों को छोड़कर कहाँ जा रहे थे !"

नेपथ्य से गूंजती वेदव्यास की वाणी--

इस प्रकार स्वयं सृष्टा, अभिशप्त होकर, हर घट में, आत्मा होकर विराजमान है। उसका उद्धार करो। तपस्या को तप दो। देह को देवत्व दो, ग्रन्थों को नहीं, ज्ञान को धारण करो। स्वयं को पहचानों ! तुमको तुम्हारी कहानी सुना रहा था। तुमको, तुम्हारी लीला दिखा रहा था। स्वयं को पहचानो। आज भी ब्रह्म ज्वालायें ही तो देविका होकर प्रत्येक वालक को देह रूपी गर्भ में अन्न से मानव तन प्रदान करती हैं। माँ प्रकृति ही तो यशोदा है जो तन का शृंगार देती है। वेद का ज्ञान ही तो सरस्वती है जिसके साथ तुम्हें पवित्र तप लीला करनी है। देह को देवत्व दो ! तपस्या को तप दो ! ग्रन्थों से अमृतमय ज्ञान लो ! आत्मा वासुदेव से अद्वैत कर शापमुक्त हो ! गो लोक में प्रवेश करो ! जय हो तुम्हारी !

रहस्य लीलाओं का जादूगर वेदव्यास अपने काल में सारे विश्व में अनूठा था और आज भी अनूठा है ! दूसरा होना बाकी है। वेदव्यास की जन्म लीला; ऊखल लीला, पारिजात लीला ! ऐसी असंख्य लीलायें हैं जिन्हें आपको सुना नहीं पाया हूं। आज का प्रवचन तो वासुदेव की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

परिचय भूमिका मात्र है। जिस दिन श्रीकृष्ण की कथा सुन लोगे, उसके ही हो जाओगे! इसमें संशय नहीं है! अब कथा का उपसंहार करते हैं।

एक ओर हैं कंस, उसकी मायावी असुर पत्नियाँ, जरासन्ध और कालयवन! दूसरी ओर है, श्रीकृष्ण की लीला! जिसने बाल्यावस्था में ही पूतना, अघासुर, बकासुर आदि असुरों को मारकर, ग्यारहवें वर्ष में कंस को मारा। उसका ही जीवन सार्थक है। वही अस्ति और प्राप्ति के माया भ्रमजाल से बच सका। परन्तु अभी जरासन्ध तो देहरूपी मथुरा पर निरन्तर आक्रमण करेगा। जो आत्मवत् जीयेगा वही जरासन्ध को सत्तरह बार परास्त कर सकेगा। विषयों की सन्धियां तो जरासंघ तोड़ेगा ही। अट्ठारहवीं बार कालयवन को लेकर आवेगा। वही बचेगा उससे; जो प्रवर्षण (जहाँ श्री हरि चिन्तन की निरन्तर अमृत वर्षा हो), पर्वत से द्वारिका (ब्रह्मरन्ध्र) में प्रवेश पावेगा। उसका जरासन्ध कुछ भी न बिगाड़ पावेगा। कालयवन (समय) समाप्त हो जावेगा। समय योगी का कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

भगवान श्रीकृष्ण ने पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया उनका पहला विवाह रुक्मिणी से हुआ। यह विवाह भी रुक्मिणी देवी की प्रार्थना पर उनका उद्धार करने हेतु, प्रभु को करना पड़ा। कथा लम्बी है। फिर सुनावेंगे। अष्ट सिद्धियों (रानियों) की कथा भी नहीं सुना पाये हैं। फिर सही!

भौमासुर का वध करने के उपरान्त साठ से चौंसठ हजार बन्दी स्त्रियों को भगवान ने मुक्त कराया। समाज उन्हें लेने को तैयार नहीं हुआ। वे असहाय भोली देवियां प्रभु से आज्ञा लेकर आत्मदाह करना चाहती थीं। समाज उन्हें पतित, वेश्या कहकर भी तो भोजन और जीने का अधिकार नहीं देना चाहता था। वासुदेव ने सुना तो रो पड़े! श्री भगवान ने उनको सम्बोधित करके कहा :—देवियों! आपकी व्यथा पीड़ा का मुझे पूरा भान है। भौमासुर के वन्दीगृह से छुड़ाकर भी आपको आपका उचित सत्कार नहीं दिलवा पा रहा हूँ। दोषी मैं ही हूं। आप सब निर्दोष हैं! निष्पाप हैं आप क्यों आत्मदाह करें!

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

यदि आपको समाज स्वीकार करने से संकोच करता है तो आप कतई दुख न करें। द्वारिकाधीश ही आपको स्वीकारते हैं। द्वारिकाधीश ही आपके पति हैं, पिता हैं, पुत्र हैं। आप ससम्मान जीवन को धारण करें। आपकी रक्षा, सेवा, जीवन का भार द्वारिकाधीश पर है। कोई भी आपको हेय दृष्टि से नहीं देख सकेगा। आप पूज्य हैं! देवकी हैं! यशोदा हैं!! यदि समाज आपको उचित सम्मान सहित ग्रहण करता है तथा आप उन्हें स्वीकारती हैं! तो हर रूप में, हर ओर, मैं ही हूँ। आप निःसंकोच अग्रसर हों।"

श्री भगवान ने क्षत्रिय यादव एवं ब्राह्मणों को भी समझाया कि धर्म के नाम पर दूसरों को पीड़ा न दें। असहाय, दीन एवं सताये हुए की सेवा ही ईश्वर की सच्ची शक्ति है। प्रभु की लीला अपरम्पार है। उनकी कथा अनन्त है।

जब प्रभु सन्यस्थ हुये तो उद्धव जी उनसे मिलने गये। उद्धव को लगा श्री कृष्ण जाने की तैयारी में हैं तो वे रो पड़े। भगवान वासुदेव ने उद्धव जी को सान्त्वना दी। अमृत का उपदेश किया। धर्म के रहस्य बताये। प्रभु ने कहा "उद्धव! मेरे प्यारे यदुवंशी भी धर्म विमुख हो उठे हैं। शीघ्र ही वे महाविनाश को प्राप्त होंगे। जो योद्धाओं, वीरों, तीरों, तलवारों से युद्ध में नहीं मारे जा सकें, वे सरकन्डे की सीकों द्वारा नष्ट हो जायेंगे। इन्होंने धरती पर जीने का अधिकार खो दिया है। मनुष्य को ईश्वर ने धरती रूपी बगिया का माली बनाकर भेजा है। चलते समय कहा था कि जैसे मैं आत्मा होकर सचराचर की उत्पन्न धारण और भरण-पोषण कर रहा हूँ। इसी प्रकार तू भी पृथ्वी पर मेरी ही भाँति सेवा कर! प्राणी मात्र का ईश्वर बन! सेवा के तप से मेरे परमपद को प्राप्त हो। परन्तु आज यदुवंशी मूल धर्म से विमुख हो उठे हैं। माली बाग को नष्ट करके, घर बसाने में लग गए हैं। बाग के फल फूल और पशु पक्षियों को नष्ट करने लगे हैं। इसलिए अब मालियों के उजड़ने का समय आ गया है। सागर के किनारे की घास, 'डूबने को तिनके का सहारा!' आज वही तिनके नष्ट करेंगे यादव जाति को। यदा-यदा हि… …।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

निष्पाप उद्धव रो पड़े ! "प्रभु आप भी जा रहे हैं। धरती पर विनाश लीला होगी ! मेरा क्या होगा ?" श्री भगवान ने उत्तर दिया, "हे निष्पाप उद्धव ! बदरी वन (बदरीनाथ धाम) मेरे द्वारा रक्षित क्षेत्र है ! तुम वहीं जाकर तपस्या करो। अष्ट सिद्धियाँ ही मेरी अष्ट पत्नियाँ हैं। योग ही राधा है ! मुझे पत्नियों (सिद्धियों) से श्री राधा (योग) अतिप्रिय हैं। उनके चरणों में मैं स्वयं रहता हूँ !" श्री भगवान उद्धव को प्रभु प्राप्ति का रहस्य बताते हैं। एक मार्ग अष्ट सिद्धियों का है और दूसरा मार्ग योग का है। पत्नियों का भाव है कि प्रभु हमारे पति हैं ! मेरे हैं ! स्वामित्व की संकीर्णता का भाव है। दूसरी ओर श्री राधा जी का क्या अधिकार ? वे कैसे कहे कि कृष्ण मेरे हैं ? श्री राधा जी (योग) कहती हैं श्री कृष्ण तो सबके हैं ! मैं उनकी हूं ! यहीं भेद है, सिद्ध कहता है कि मैं सिद्धियों को प्राप्त करता हूं। योगी कहता है मैं स्वयं को प्रभु में ही व्याप्त करता हूं ! यही भेद है।

श्री राधा जी कहती हैं वासुदेव तो सागर हैं और मैं (राधा) हूँ लोटा ! यदि प्रभु पर अपना अधिकार जताऊँगी तो उनको भी तो संकीर्ण लोटा बनना होगा। उनकी महिमा घट जायेगी। सागर को लोटे में समाना होगा। क्यों न ! मैं ही जो लोटा भर हूँ। उस सागर को समर्पित हो जाऊँ। मुझे सागर का सम्मान मिले और उनमें हिलोर भी न आये। सिद्धियों का योग संकीर्णता का है। योग का मार्ग प्रभु मिलन का है। श्री राधा जी वृषभानुदुलारी हैं। वृष राशि में भानु (सूर्य) कब आते हैं ? ज्येष्ठ आषाढ़ अर्थात् मई जून की तपती दुपहरी में ! तपस्विनी का तप ही तो राधा है। राध का अर्थ है ज्योति !

"प्रेम गली अति साँकरी, जामें दो न समाये।"

श्री राधा अर्थात् योग का मार्ग दो को सहन नहीं करता। प्रभु और मैं दो हों ! यह असह है। मैं (योगी) स्वयं को उसी सागर में मिलाकर एक ही क्यों न कर दूं ! इस गली में चलन तो एक का ही है। प्रेम के मार्ग में कृष्ण और राधा दो नहीं हो सकते। वे एक ही हैं। जब भी अलग हैं तो आधे हैं।

"बिन राधे गोविन्द आधे।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

श्री भगवान से आज्ञा लेकर भोले निष्पाप उद्धव बदरीवन में आये हैं। यादव वंश के महा विनाश को एक वाण लीला की कल्पना से सिहरते रहे हैं। वारम्बार नेत्र अश्रुजल से छल-छला उठते हैं। उद्धव जी ने वारम्वार श्री हरि से दोनों विचारों को त्यागने की प्रार्थना की परन्तु समाधि में जाते योगेश्वर श्रीकृष्ण ने उद्धव को समझा बुझाकर विदा कर दिया ! भविष्य में होने वाले घटनाक्रम को दिखा कर समझा दिया कि ऐसा होना अवश्यमभावी है।

वदरी का अर्थ है 'बेर' ! वेरों का वन ही वदरीवन है। उद्धव जी ने द्वारिकाधीश की मूर्ति वनाई है उसी के ध्यान तप में लग गये। बेर खाते हैं। तप्तकुण्ड में स्नान करते हैं और निरन्तर कृष्ण रूपी ज्वालाओं में तप रहे हैं। समय फिसल रहा है।

एक दिन समाधि से उठे तो क्या देखते हैं, उनके सामने श्री भगवान द्वारिकाधीश खड़े मन्द-मन्द मुस्करा रहे हैं। उनके हाथ में ताजे बेर हैं। उद्धव जी उठकर उनको प्रणाम करते हैं। श्री भगवान कहते हैं, "उद्धव ! मैं वहुत देर से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। मुझे भूख लगी है। जल्दी मुंह धोकर आओ ! बैठकर बेर खायेंगे।"

उद्धव जी शीघ्रता से तप्त कुण्ड पर आते हैं। मुंह धोने को सिर झुकाया तो जल में अपने चेहरे के स्थान पर उन्हें द्वारिकाधीश का सुन्दर मोरपंख सजा मुखड़ा दिखाई पड़ता है। चौंक जाते हैं। सोचते हैं नेत्र भ्रम हो गया है। निरन्तर स्वरूप के ध्यान के कारण नेत्रों में छवि वस गई है। इसलिए ऐसा हो रहा है। नेत्रों को जल के छींटे देकर स्वस्थ करते हैं फिर जल में देखते हैं। चेहरा श्री कृष्ण का ही है। बारम्वार ऐसा करते हैं परन्तु अपना चेहरा नहीं देख पाते हैं। उद्धव के स्थान पर द्वारिकाधीश का मुखड़ा ही जल में दिखाई पड़ता है। उधर प्रभु पुकार रहे हैं, "उद्धव ! जल्दी करो न ! मुझे भूख लगी है। क्या कर रहे हो वहाँ पर ! आओ न !"

उद्धव जी लौटते हैं। प्रभु के सम्मुख हाथ जोड़ कर खड़े हो जाते हैं और विनती करते हैं :—"नारायण ! आप क्या लीला कर रहे हैं ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उद्धव अपने स्थान पर आपका ही चेहरा क्यों देख रहा है ?" "हे निष्पाप उद्धव ! जब तुम सिद्धियों के मार्ग से मुझे सिद्ध कर रहे थे ! मैं एक नया उद्धव वन रहा था ! तुम्हारा ही पुत्र वन तुम्हारे आँगन में खेल रहा था ! आज ! हे पुनीत ! तुम मुझको समर्पित होकर ध्यान द्वारा मुझसे योग कर रहे हो ! उद्धव ! तुम्हीं वताओ ! मुझसे परे अब तुम्हारा रूप भी कैसे हो सकता है ! रे ! उद्धव ! तू स्वयं कृष्ण हो गया है !" नारायण अन्तर्ध्यान हो गये !

निष्पाप उद्धव के नेत्र खुले। बेर के ढेर पर नारायण की सुन्दर प्रतिमा रखी है। उद्धव स्वयं को निहारते हैं ! विस्मय से स्वयं को देख रहे हैं। उद्धव ! अंग-प्रत्यंग वासुदेव हो गये हैं ! श्री राधा के शब्द "उद्धव जी ! जिन्हें आप सिद्ध करना चाहते हैं। आप उन्हीं में क्यों नहीं सिद्ध हो जाते हैं !" "श्री राधे ! राधे !!" उद्धव जी का रोम-रोम पुकार उठता है।

वदरीनाथ धाम इस कथा की स्मृति ही है। दो मूर्तियाँ हैं यहां पर ! एक मूर्ति भगवान वासुदेव की जो बेरों पर ही रखी है। यह बेर अमर हैं। दूसरी मूर्ति उद्धव की, जो गोपाल हो गया। दोनों मूर्तियां एक सी हैं। भेद जरा भी नहीं है। छह (६) महीने भगवान द्वारिकाधीश की पूजा होती है ! छह (६) महीने कृष्ण रूप में उद्धव जी की पूजा होती है। गोविन्द हरि !

स्वामित्व की संकीर्णता अथवा समर्पण का योग। यही श्री कृष्ण उद्धव की कथा है ! प्रभु की लीला ही अमृत है।

घने वादल आयें। छाये रहें वरसे नहीं ! क्या पौधों को सुख मिलेगा ? नहीं ! उल्टा कीड़े और अधिक पड़ जावेंगे।

वेद ब्राह्मण, आरण्यक आदि का ज्ञान यदि घने वादलों की भाँति मस्तिष्क पर छाया रहे ! जीवन में, जगत व्यवहार में वरसे नहीं तो क्या सुख होगा ? नहीं ? दम्भ, मिथ्याभिमान के कुछ कीड़े जीवन में अधिक पड़ जायेंगे।

इसलिये नारायण ज्ञान को व्यवहारिक वनाने के लिये लीला करते हैं। ईश्वर को व्यवहार में उतारो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

डूबते को तिनके का सहारा। जिन्दगी के सहारे रूपी यह तिनके अर्थात् सन्तान, मकान, दुकान आदि के सहारे ढूँढते तुम! क्या इन्हीं तिनकों के कारण नष्ट नहीं हो रहे हो? सहारे के तिनके मारते मुझको!

याद करो! जब यादव धर्म विमुख हुए तो किनारे के तिनकों से नष्ट हो गये थे! क्या आज दुख, पीड़ा अभाव के तिनकों से तुम नष्ट नहीं हो रहे? हर घर, हर व्यक्ति का जीवन, कैंसर के फोड़े सा! हर क्षण दुखता? हर क्षण रिसता! शान्ति मिली चिता की लकड़ियों पर। घास के तिनकों की मार से नष्ट होती वेद की यह महान संस्कृति!

मेरी इस कथा को नित्य, बारम्बार दुहराओ! जीवन व्यवहार में उतारो! रोग मुक्त हो जाओगे।

सुइयां अद्वैत की ओर बढ़ रही हैं। दो से एक होना चाहती हैं। प्रभु के प्रकट होने के क्षण पास आते जा रहे हैं। हम भी सुइयों की भाँति श्री हरि से अद्वैत करें। मूंद के आँख एक हो जायें। देह में प्रभु को प्रकट करें। कृष्ण रूपी पवित्र सात्विक विचारों को जन्म दें। आज के कथा प्रसाद का नित्य सेवन करें।

आज प्रभु के प्रकट होने की लीला भी अति अद्भुत है। भक्त दम्पति खीरे को काट कर बाल कन्हैया को प्रकट करते हैं। खीरा अपभ्रंश है! फूट ककड़ी का ही प्राचीन काल में प्रयोग होता था। फूट ककड़ी न मिलने पर उसके स्थान पर खीरे का भी प्रयोग होता था। आज का मन्त्र महामृत्युञ्जय है। इस मन्त्र में उपमा स्वरूप फूट ककड़ी का ही वर्णन आया है। जीव को अमरत्व दे वही महामृत्युञ्जय है।

"त्रयम्बकम् यजामहे सुगन्धिं पुष्टि वर्धनम्।
ऊर्वारूकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥"

अर्थ करें। हे 'त्रयम्बकं' अर्थात धारण सृजन और संहार के 'यजाम्' यज्ञों द्वारा 'अहे' अहो! 'सुगन्धिं' जड़त्व को सुगन्धित पवित्र वनस्पतियों में तथा वनस्पतियों को 'पुष्टि' पुष्ट शरीरों में 'वर्धनम' वृद्ध करने वाले! हे वर्धमान (विष्णु)! हे प्रभु आप ही तो धारण, 'सृजन, संहार (अ+उ+म्=ॐ) के यज्ञों द्वारा भस्मी को सुन्दर फलों तथा फलों को नाना जीवों की पुष्टि देहों में, आत्मा होकर, निरन्तर यज्ञों द्वारा प्रकट करते हो 'ऊर्वारूकम्' 'इव' (उर्वारुकमिव) उस फूट ककड़ी की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भाँति (इव) जिस प्रकार फूट ककड़ी अपने अन्तर्दाह से स्वयं फट जाती है। उसका अन्तर्दाह ही उसे फाड़ देता है। उसी फूट ककड़ी की भाँति ! हे कृष्ण ! हे वासुदेव ! तपस्या की अग्नियों से मैं, स्वयं अन्तर्दाह से इस देह को फाड़कर, भस्म करके, आत्म ज्वालाओं में, मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्, आवागमन की सीमाओं को तोड़ता अनन्त में व्याप्त हो जाऊँ ! प्रभु आज कुछ ऐसी कृपा करो मुझ पर। हे नाथ ! हे माधव ! मैं शरण हूँ आपकी ! आपने गीता में निष्पाप अर्जुन को सारे रहस्य वताये हैं। आप ही व्रह्मा हैं ! आप ही विष्णु हैं ! आप ही शंकर हैं ! छन्दों में गायत्री, प्रणवों में ओंकार, नदियों में गंगा, पर्वतों में हिमालय और सम्पूर्ण भूत प्राणियों के हृदय में आत्मा होकर वास करने वाले भी आप हैं ! हे कृष्ण ! आपके इस देह में रहते हुये भी यदि कालयवन और जरासंध, मेरा भक्षण करें तो मुझ जैसा हतभाग और कौन होगा ! हे नारायण ! वासुदेव ! हे लीलाधाम ! मुझ पर कृपा करो ! मुझमें संकल्प और शान्ति का संचार करो ! हे नारायण ! मेरे जीवन में आज जन्म हो तुम्हारा ! सम्पूर्ण असुर नष्ट हो जावें ! आज यह जीव ! आपका दास आपका ही अनुचर वने। द्वारिका में प्रवेश पावे ! हे द्वारिकाधीश ! अव हर ओर तुम्हीं हो। तुम्हें ही देखूं ! तुम्हें ही गाऊँ ! तुमसे ही ग्रहण करूँ ! तुम्हारी ही सेवा में हर क्षण लगा रहूँ ! हर साँस और धड़कन गाये तुमको हे देव ! घड़ी की मिलती हुई सुइयों की भाँति ! हे अन्तर्देव मैं तुममे ही एकीभाव से अद्वैत कर जाऊँ ! दो सुइयाँ एक हो गयी हैं। जीव और आत्मा को एक करो ! मून्द के आँख वासुदेव में खो जाओ रे भक्तों ! हर ओर प्रणाम है ! प्राणी मात्र के श्री चरणों में प्रणाम है। भक्त सागर ! सनातन स्वामी का दण्डवत प्रणाम लो ! आप सव वासुदेव हैं ! मेरे गोपाल हैं ! सवको प्रणाम है ! भीतर वाहर ! वासुदेव ! तू ही तू है ! तू ही तू है ! एकोव्रह्म द्वितीयो नास्ति ! कृष्ण !! कृष्ण भजो रे ! डूब जाओ कृष्ण रूपी प्रेम के सागर में जो उवरे सो पापी ! गहरे उतरते जाओ ! समाधिस्थ होकर कृष्ण की वांसुरी सुनो ! वृन्दावन में नाचो, झूमो, गाओ ! गोविन्द हरि !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

निराकरण

—सनातन स्वामी ! आपके ग्रन्थ ने हमारे मन में वहुत से सन्देह छोड़ दिये हैं। क्या आप उसका निराकरण करना चाहेंगे ?

—अवश्य ! यदि जनहित में उचित होगा तो वे प्रश्न और उनके उत्तर पुनः प्रकाशित ग्रन्थ में भी छपवाये जा सकेंगे। आप पूछें।

—सनातन स्वामी ! आप कहते हैं कि हम एक बूंद रक्त नहीं बना पाये। जबकि आज के विज्ञान ने 'जीन' भी वनाया है और 'टैस्ट-ट्यूब-बेबी' भी।

—आप लगता है वस्तु स्थिति से अपरिचित हैं। विज्ञान 'जीन' बना नहीं पाया है वरन प्रकृति के द्वारा वनाये 'जीन' को कोश से अलग कर पाया है। 'टैस्ट-ट्यूव-बेवी' अभी नहीं वना पाये है। न तो हम 'स्पर्म' ही वना पाये हैं और न 'ओवा' ! 'फ़ैलो पियन' ट्यूव की कार्यप्रणाली को हम उन ट्यूव के विना भी कृत्रिम ट्यूवों द्वारा कर सके हैं। परन्तु टैस्ट-ट्यूव में आरोपित 'ओवा' को दुवारा हमें गर्भाशय में ही ले जाना पड़ता है। बेवी गर्भाशय में ही वनता है। 'परमाणुओं' को जोड़कर हम एक निर्जीव लोहे की कील भी नहीं वना पाये हैं। उसके लिए आज भी लोहा ढूंढते हैं।

—सनातन स्वामी ! "लीला दर्पण" पुस्तक को पढ़ते समय मन में संशय उत्पन्न होता है कि क्या आपकी आस्था भारतीय संविधान, धर्म निर्पेक्षता एवं प्रजातन्त्र में है ?

—मेरी आस्था एवं पूर्ण निष्ठा भारतीय संविधान, धर्म निरपेक्षता एवं प्रजातन्त्र में है। परन्तु मुझे विनम्र सन्देह है कि भारतीय संविधान धर्म निर्पेक्षता एवं प्रजातन्त्र देने वाले हमारे राष्ट्रीय नेताओं की इसमें पूर्ण निष्ठा अथवा आस्था थी ?

—ऐसा सोचने का कारण ?

—वड़े हितों की रक्षा के लिए छोटे हितों का वलिदान करना सर्व-मान्य सिद्धान्त है। कीमती शेर को पकड़ने के लिये शिकारी सस्ता बकरा वांधता ही है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भारतीय संविधान, धर्म निरपेक्षता और प्रजातन्त्र की मूल भावनाओं की हत्या करके नारी को मनुष्यता के अधिकारों से वंचित करना, उसे सम्पत्ति का अधिकार न हो, सन्तान का अधिकार न हो, उस पर सौतों और रखैलों का अत्याचार हो, उसे धर्म स्थान पर पूजा करने का अधिकार न हो। हाथ में आई मछली की भाँति पुरुष जैसे चाहे काटे और जब चाहे उसे तीन बार त्यागता हूं कहकर सड़क पर फेंक दे। क्या भारतीय संविधान में प्रजातन्त्र और धर्म निर्पेक्षता की मूल भावनाओं की हत्या नहीं है? क्या साम्प्रदायिकता शेर नहीं बनी और भारतीय संविधान, प्रजातन्त्र और धर्मनिर्पेक्षता मात्र बकरा?

––सनातन स्वामी आप साम्प्रदायिक हैं।

––काश! आज राष्ट्रपिता, पूज्य बापू होते! वे आपसे यही प्रश्न पूछते! सम्भवतः आप उनको भी साम्प्रदायिक ही कहते!

––अन्य कारण?

––मन्दिरों का प्रत्यक्ष-परोक्ष अधिग्रहण! मस्जिद, गिरजा, गुरुद्वारा आज भी पूज्य एवं पवित्र है। वहाँ हमारे नेता यही हथकन्डे नहीं अपनाते हैं। क्यों?

––अन्य कारण?

––शिक्षा की विषमता अल्प संख्यक होने के नाते दूसरे सम्प्रदायों को धर्म ग्रन्थ पढ़ाने का अधिकार देना और बहुसंख्यक की मुहर लगा हमको इस अधिकार से वंचित करना। जबकि विश्व में अल्प संख्यक, सत्ता विहीन और धार्मिक शिक्षा के अधिकार से विहीन सम्प्रदाय हम ही हैं। बापू की कभी ऐसी भावना नहीं रही होगी।

––सनातन स्वामी क्या आप ऐसा नहीं मानते कि साम्प्रदायिक सद्भाव के लिये तथा साम्प्रदायिकता के विष से समाज को निरापद करने के लिये ही ऐसे कानून एवं प्रतिबन्ध बनाये गये हों।

––मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और धार्मिक किसी भी दृष्टि से इसका औचित्य सिद्ध नहीं हो सकता। धार्मिक शिक्षा के अभाव से साम्प्रदायिकता सदा हौवा बनकर खड़ी रहेगी। विभिन्न सम्प्रदायों में आपसी मन मुटाव, भय वैमनस्य का वातावरण, साम्प्रदायिक अवसरवादी ठेके-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

दार तथा अवसरवादी नेता, सदा बनाये रखेंगे। धार्मिक विचारों से अनभिज्ञ जन समुदाय इन राजनैतिक, साम्प्रदायिक ठेकेदारों के हाथ की कठपुतली बने रहेंगे। हिंसा, भय, आतंक और अनिश्चितता का वातावरण सदा बना रहेगा। आप ही बतायें आजादी के छत्तीस वर्ष बाद भी यह समस्या घटने के बजाय बढ़ी है। क्यों ?

—इसका समाधान ?

—सभी सम्प्रदायों को भारतीय संविधान, धर्मनिर्पेक्षता, राष्ट्रीय हितों एवं साम्प्रदायिक सद्भाव को ध्यान में रखते हुये अपने धर्म ग्रन्थ पढ़ाने का समान अधिकार हो। अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक की राजनैतिक उकसाने वाली धोखाधड़ी बन्द हो। राष्ट्रीय नेता संकीर्ण साम्प्रदायिक भावनाओं एव हित साधन से ऊपर उठकर मानवीय मूल्यों की पुनः स्थापना, राष्ट्रीय चिन्तन एवं विचार धाराओं को बढ़ावा दें। संकीर्णताओं की पीठ सहलाने, थपथपाने से बाज आयें। मौलिक स्वतन्त्र चिन्तन को प्राण पल्लवित करें। साम्प्रदायिक धर्मस्थानों से राजनीतिक नेता दूर रहें। धर्म भी राजनीति से दूर रहे। जैसा कि हमने आजादी के समय स्वीकार किया था। अपने द्वारा दिये गये वायदों से सरकार विमुख न हो।

—सनातन स्वामी ! शिक्षा में धर्म को किस प्रकार ला सकते हैं जो सभी साम्प्रदायिक भावनाओं के विपरीत न हो तथा जिस सम्प्रदाय विशेष का हो, उनके अनुयायियों में सभी सम्प्रदायों के प्रति सम्मान एवं श्रद्धा उत्पन्न करता हो। ऐसा कोई प्रयोग किया आपने ?

—जी हाँ ! 'मन्दिर की कहानी' और 'तीन तागों का धनुष' दो बाल पुस्तकें, एक प्रकाशक द्वारा, शिक्षा मन्त्रालय में भिजवाई थीं। उन बाल पुस्तकों का उद्देश्य था कि बालक मन्दिर के ज्ञान से साम्प्रदायिक स्वरूप को भूलकर उसके सामाजिक और चरित्र को उज्जवल करने वाला स्वरूप देखें तथा अन्य सम्प्रदाय के धर्म स्थानों को भी वैसा ही सम्मान दें।

—क्या आपकी पुस्तकें स्वीकृत हुईं ?

—नहीं अस्वीकृत हो गईं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

--क्यों ?

--पता नहीं । उ०प्र० की शिक्षा मन्त्री जाने ।

--आपके विचार से साम्प्रदायिकता को जीवित रखने वाला अथवा वाले कौन से राजनीतिक दल हैं ?

--जो साम्प्रदायिकता का हौवा खड़ा करके सबसे अधिक लाभ ले रहा हो । साम्प्रदायिक एकता उस दल के हित में भी तो नहीं होगी । कृपया इस विषय में अधिक न पूछें ।

--सनातन स्वामी ! क्या आप राजनीति में प्रवेश करने का .....!

--कदापि नहीं ! कभी नहीं ! मैं सन्यासी हूं । मुझे अपने वस्त्र और रंग से असीम प्यार है । एक चिन्तक और विचारक के रूप में भावी अबोध शिशुओं के भविष्य के लिए जो सेवा हो सकती है । वहीं तक सीमित हूं । किसी दल अथवा राजनीति से मेरा न तो कोई सम्बन्ध है और न होगा कभी ।

--सनातन स्वामी लीला दर्पण पुस्तक में आपने बहुत कुछ कहा है परन्तु अति संक्षेप में ?

--लीला-दर्पण पुस्तक पृष्ठभूमि है । कृष्ण दर्शन पर 'रहस्य-लीला' ग्रन्थ दूंगा । तीन भागों में होगा । प्रत्येक भाग पाँच सौ से सात सौ पृष्ठों का होगा । उसको छपवाकर मुफ्त बँटवाना सामर्थ्य से बाहर है । यदि कोई समर्पित प्रकाशक मिल गया तो उसे सौंप दूंगा ।

--जो पुस्तकें आप स्वयं छपवाते हैं उनका मूल्य क्यों नहीं लेते ?

--मैं सन्यासी हूं । व्यवसायी नहीं हूं । प्रसाद ही बँटेगा । दूसरा कारण है उन पुस्तकों में जो धन लगा है वह समाज का है । समाज के लिये है ।

--क्या आप वेद भाष्य भी कर रहे हैं ?

--जी हाँ ! ऋग्वेद से शुरू कर रहा हूं । प्रत्येक ऋषि पर पुस्तक होगी । इस प्रकार वेद का भाष्य बहु-खण्डीय होगा । यदि आश्रम की ओर से छपा तो मुफ्त ही बँटेगा । अन्यथा 'पब्लिशर' जो उचित दाम रखें ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

विनम्र निवेदन

पाठक मित्र,

"लीला-दर्पण" द्वारा हम आपकी निष्काम सेवा कर सके यह हमारा परम सौभाग्य है। आपकी ही भाँति, घर-घर सत्य ज्ञान का अमृत हम आप सबके सहयोग से पहुंचा सकें, यही हमारा सतत प्रयास है। प्राणीमात्र की निष्काम सेवा ही हमारा लक्ष्य है। सेवा ही सच्चा सुख है! अमृत है! प्रभु प्राप्ति का सुखद, सरल एवं आनन्दपूर्ण मार्ग है।

काश! आप भी पावन सेवा के धर्म को सामर्थ्यानुसार अपनाकर, प्रभु की राह में हमारे सहयोगी बनते!

दासता के लम्बे अन्धकारमय युग के उपरान्त; धर्म को समाज, राजनीति तथा शिक्षा से मिटाकर हम रोशनी के स्थान पर अन्धेरों को ही गहन करते आये हैं। आजादी के उपरान्त के छत्तीस बर्षों में जितना भी सस्ता साहित्य प्रकाशित हुआ उसमें सामाजिक नेता सदा नायक बना और धर्म को खलनायक ही बनाया गया। धर्मगुरु; जो पापी, व्यभिचारी था! सेठ; जो खून चूसता था! राजा, जो प्रजा को लूटता था! नेता; जो जनहित में बलिदान हो गया; इस प्रकार भावी पीढ़ियों के मन में धर्म के प्रति घृणा, सन्देह, आक्रोश, उपेक्षा एवं अनादर का भाव योजनाबद्ध नीति से भरा गया तथा निरन्तर है। गली के नेता से लेकर राष्ट्रीय स्तर के नेता; यहाँ तक कि राष्ट्राध्यक्ष तक अपनी भूलों, कमियों और पापों के लिए धर्म को गाली देकर, दोषी ठहराकर, जनता को निरन्तर बहका रहे हैं। चाहे राष्ट्रीय चरित्र की समस्या

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हो अथवा शिक्षा की, साम्प्रदायिक तनाव और हिंसा की वात हो अथवा बहुओं के जलने की! इन सवके लिए धर्म ही दोषी है, जिसे हम आजादी के साथ ही अलगाव की फाँसी दे आये हैं।

धर्म के सत्य स्वरूप से अनभिज्ञ भोले जनसमूह उनकी लच्छेदार वक्तव्यों में फँसकर रही-सही आस्था भी खो रहे हैं। ऐसी दयनीय दशा में आपकी थोड़ी सेवा भी अमूल्य एवं वन्दनीय है।

आप कृपया इस पुस्तक को आलमारी में वन्द न करें। अधिक से अधिक लोगों को पढ़ने को दें। गोष्ठियाँ एवं सत्संग करें। आप महापुन्य के अधिकारी होंगे। यदि आप पुस्तकों के प्रकाशन एवं वितरण में भी सहयोग देना चाहें तो हम से मिलें अथवा पत्र व्यवहार करें। महाविनाश के कगार पर खड़ी, इस महान संस्कृति, धर्म एवं जाति की रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य एवं सच्ची ईश्वर भक्ति है।

पत्र व्यवहार का पता :

श्री स्वामी सनातन श्री

श्री सनातन आश्रम,
गोरा वाग, कुर्सी रोड
(वाया अलीगंज)
लखनऊ–७
फोन ७३७९७

भवदीय,

श्री स्वामी सनातन श्री मित्र मण्डल
लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"सनातन स्वामी ! हमारे बच्चे को आशीर्वाद दो । हमारा बेटा मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम सा बने ! धर्मपुत्र युधिष्ठिर और सत्यवादी हरिश्चन्द्र सा हो !"

"इस बच्चे को पढ़ा रहे हो न ?" सन्यासी ने पूछा ।

"हाँ ! अच्छे स्कूल में पढ़ता है !"

"सच बताओ क्यों पढ़ा रहे हो ? इसलिये न ! कि अच्छी नौकरी मिले, मोटी तनखा और खूब मोटी ऊपर की आमदनी ?" सन्यासी ने पुनः प्रश्न किया ।

"सारी दुनियाँ तो यही कर रही है !" भक्त ने कुछ सहमते हुए कहा ।

"दुनियाँ की बात छोड़ो ! तुम बालक को भगवान राम सा पवित्र बनाना चाहते हो अथवा ………………??"

कैसी थी वह शिक्षा ! कैसे थे वे लोग ! वे आपके ही पूर्वज थे ! आइये लीला-दर्पण में अपने आज और कल के रूप निहारें ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant